REGD. WITH OFFICE OF REGISTRAR OF NEWSPAPERS FOR INDIA (Government of India)
RNI No :. DELHIN/2020/79598 Title Code : DELHIN28901
Date of publishing 6th February, 2022, Date of Posting 2nd - 8th , Total Number of pages 41

वर्ष : चतुर्थ, अंक-2
फरवरी 2022
मूल्य : 65/-

प्रखर गूँज साहित्यनामा

send matter for magazine at
prakhargoonj@gmail.com
https://prakhargoonjpublications.com

प्रखर गूँज साहित्यनामा

(मासिक पत्रिका)

अंक : फरवरी, 2022

REGD. WITH OFFICE OF REGISTRAR OF NEWSPAPERS FOR INDIA
(Government of India)
RNI No :. DELHIN/2020/79598
Title Code : DELHIN28901

Editor : Neelu Sinha
7982710571, 7838505899
Managing Editor : Lal Chandra Yadav
Mob.: 9452951770, 8218728751
Sub Editor :Artee Priyadarshini
Mob.: 7860910843

संपादकीय कार्यालय:
एच–3/2, सेक्टर–18, रोहिणी, नई दिल्ली–110089
7982710571, 7838505899
011-42635077
prakhargoonj@gmail.com

मूल्य एक प्रति : 65/- **(साधारण डाक)**
एक प्रति : 100/- **(कोरियर चार्ज सहित)**
वार्षिक शुल्क : 730/- **(साधारण डाक)**
वार्षिक शुल्क : 1150/- **(कोरियर चार्ज सहित)**

Bank Transfer
PRAKHA R GOONJ
A c. No. : 38554156693
IFSC No. : SBIN0015841
State Bank of India, Sector-18, Rohini, Delhi

Printed & Published by
Neelu Sinha, Owner: **Prakhar Goonj** and **Printed at Thomson Press (India) Ltd.,** B-315, Okhla-1, Okhla Industrial Area, New Delhi- 110020, and **Published At: Prakhar Goonj**, H-3/2, Sector-18, Rohini, Delhi-110089.

Editor : Neelu Sinha.

नीलू सिन्हा (संपादकीय) 2

कहानी/लघुकथा/संस्मरण/नाटक/व्यंग्य

आचार्य धीरज द्विवेदी 'याज्ञिक'/माँ और बन्दर 3
मुकेश कुमार ऋषि वर्मा/पौष की सुबह 7
रंगनाथ द्विवेदी/वेलेंटाइन–डे 14
रमेश चंद्र/तुस्सी ग्रेट हो संजना 15
नमिता 'सिंह' आराधना/फ़र्ज 24
रोहित मिश्र/मन का भय 33
निशान्त राज/राजनीति के गुरूमंत्र 34

कविता/ग़ज़ल

हनुमान मुक्त/आत्मा की शांति 5
व्यग्र पाण्डे/वे आँखें 10
विनोद प्रसाद/माँ 11
पूजा भारद्वाज/बेड़ियां नारी की 23
हरि बख्श यादव 'हर्ष'/क्रांति का आह्वान 32
रामानुज अनुज/रात की आँखें लगी 36
शालिनी अग्रवाल 'चकोर'/गुबार 39

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक समीक्षा 40

आलेख/उपन्यास

गोपेन्द्र कुमार सिन्हा गौतम/बिहार की राजनीति और राबड़ी देवी..... 4
शिखर चंद जैन/जब आप घिर जाएं मुसीबतों और चुनौतियों से 6
नीरज कृष्ण/अर्न्तराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस 21 फरवरी 8
'प्रीति अज्ञात'/प्रेम है, तो उम्मीद भी है! 12
चित्तरंजन गोप/अफीम की खेती 26
सुधा आदेश/उपन्यास श्रृंखला.. 27
डॉ. उषा किरण/अभी–अभी हमने नए वर्ष में प्रवेश... 31
वह शर्मसार हुए/मोहन लाल यादव 37
आरती प्रियदर्शिनी/पुनर्जन्म के सिद्धांत 41

Mail : prakhargoonj@gmail.com,
sinha.neelu123@gmail.com

रिश्तों में भावनात्मक दुरुपयोग/अब्यूज अर्थात 'गैसलाइटिंग' (Gaslighting)

नीलू सिन्हा (संपादक)

आप जब सक्षम होते हुए भी स्वयं को असक्षम महसूस करें, कुछ भी निर्णय लेने में जब महसूस हो कि किसी की राय या स्वीकार के बिना हम निर्णय नहीं ले सकते, हमेशा किसी को खुश रखने के लिए खुद को उपेक्षित महसूस करें, खुद की गलती न होते हुए भी रिश्तों के खराब होने के भय से हमेशा खुद ही माफी मांगते रहें ताकि दूसरे को बुरा न लगे या हमेशा यह महसूस हो कि तुम्हारी सोच पर किसी और का नियंत्रण है जो तुम्हें भावनात्मक और मानसिक स्तर पर कमजोर या अपंग बनता जा रहा है तो यह समझ जाना चाहिए कि तुम्हारा सम्पूर्ण अस्तित्व किसी और के नियंत्रण में है। आपकी खुशियां, आपके रिश्ते, आपकी सोच और आपका व्यवहार सब किसी और के द्वारा नियंत्रित है।
आपको हर बात पर अपनी सहमति देनी है क्योंकि आपको लगता है कि आपकी कही गयी हर बात नकारी जाएगी।

ये एक भयानक स्थिति है जब आप जीवित होते हुए भी जीवित नहीं हैं। इस स्थिति में कोई भी अपना आत्मसम्मान कायम नहीं रख सकता और जहाँ सम्मान नहीं है या आत्मसम्मान नहीं है वहां रिश्ते केवल औपचारिक हैं। हर जायज-नाजायज बात को सहते हैं और बाद में आपको यह कह दिया जाता है कि 'अरे ये तो ऐसे ही कह दिया था, इसका कोई मतलब नहीं था' और हर बार आपको ऐसी बेमतलबी बातों को सहन करने के लिए आजमाया जाता है और आप निरंतर इसी उलझन में जीवन गुजार देते हैं कि आप इस दुनियाँ में क्यों हैं?

यदि ऐसा कभी कबार होता है तो स्थिति असामान्य नहीं है लेकिन यदि ये आपके जीवन का रोज का हिस्सा है तो न चाहते हुए भी आप 'गैसलाइटिंग' का शिकार हैं। ऐसे में जरूरी है कि आप अपनी स्थिति को समझें और ऐसे अमानवीय व्यवहार कि गिरफ्त से निकल अपना अस्तित्व बनायें। गिरफ्त से निकलने का अर्थ यह नहीं कि आप रिश्तों से दरकिनार कर लें बल्कि इन रिश्तों में रहते हुए भी खुद को मजबूत बनाएं। 'गैसलाइटिंग' व्यव्हार से जुड़ा रिश्ता केवल दो लोगों का ही नहीं है बल्कि उस रिश्ते की परिधि में आये सभी रिश्ते इस नकारात्मकता से प्रभावित होते हैं और सबसे ज्यादा वो पीढ़ी जिसका भविष्य अभी बनना है। गैसलाइटिंग करने वाले ज्यादातर हमारे करीबी होते हैं जिनके व्यवहार के पीछे भी कई तत्व होते हैं जैसे इस तरह के लोग अक्सर या तो दूसरों पर अपनी शक्ति द्वारा कण्ट्रोल करना चाहते हैं या फिर ये लोग खुद ही हमेशा असुरक्षा के घेरे में होते हैं। ऐसे व्यक्ति खुद पर भी भरोसा नहीं करते। ये लोग इतने शातिर होते हैं कि आपको निरंतर नकारते भी रहेंगे और आपके साथ होने का दिखावा भी करते रहेंगे।

अपने आपको इससे निकालिये और एक कदम खुशहाल और मजबूत जीवन की और बढ़ाइए। अपने निर्णयों पर भरोसा कर उनकी जिम्मेवारी लीजिये। जो आपको पसंद नहीं है या नाजायज है उसके लिए एक सख्त 'ना' कहना सीख लीजिये। रिश्तों की जरूरत आपको ही नहीं सामने वाले को भी है इसीलिए केवल सामने वाले को बुरा न लगे इसलिए हर बात पर हाँ में हाँ मिलाना छोड़िये। हर व्यक्ति का एक 'पर्सनल बबल' होता है उसके अंदर किसी को आने की इजाजत नहीं होती चाहे मानसिक स्तर पर चाहे शारीरिक स्तर पर इसलिए अपनी और दूसरों कि भी सीमाएं निर्धारित करना सीखिए। साथ ही आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने की कोशिश कीजिये। जीवन अमूल्य निधि है, इसपर उतना ही हक आपका है जितना औरों को अपने जीवन पर है।
न गलत करिये, न गलत सहिये।

माँ और बन्दर

आचार्य धीरज द्विवेदी 'याज्ञिक'

आज बन्दर और बन्दरिया के विवाह की वर्षगांठ थी। बन्दरिया बड़ी खुश थी। एक नज़र उसने अपने परिवार पर डाली तीन प्यारे-प्यारे बच्चे, नाज उठाने वाला साथी, हर सुख-दुःख में साथ देने वाली बन्दरों की टोली। परन्तु फिर भी मन उदास है।

बन्दरिया सोचने लगी -काश! मैं भी मनुष्य होती तो कितना अच्छा होता! आज केक काटकर सालगिरह मनाते, दोस्तों के साथ पार्टी करते हाय! सच में कितना मजा आता!

बन्दर ने अपनी बन्दरिया को देखकर तुरन्त भांप लिया कि इसके दिमाग में जरूर कोई ख्याली पुलाव पक रहा है।

उसने तुरन्त टोका-अजी सुनती हो! ये दिन में सपने देखना बन्द करो। जरा अपने बच्चों को भी देख लो जाने कहाँ भटक रहे हैं?

मैं जा रहा हूँ बस्ती में कुछ खाने का सामान लेकर आऊँगा तेरे लिए। आज तुम्हें कुछ अच्छा खिलाने का मन कर रहा है मेरा।

बन्दरिया बुरा सा मुँह बनाकर चल दी अपने बच्चों के पीछे जैसे-जैसे सूरज चढ़ रहा था उसका पारा भी चढ़ रहा था अच्छे पकवान के विषय में सोचती तो मुँह में पानी आ जाता।

पता नहीं मेरा बन्दर आज मुझे क्या खिलाने वाला है ?

अभी तक नहीं आया। जैसे ही उसे अपना बन्दर आता दिखा झट से पहुँच गई उसके पास।

बोली-क्या लाए हो जी! मेरे लिए। दो ना मुझे बड़ी भूख लगी है। ये क्या तुम तो खाली हाथ आ गये।

बन्दर ने कहा-हाँ कुछ नहीं मिला। यहीं जंगल से कुछ लाता हूँ।

बन्दरिया नाराज होकर बोली-नहीं चाहिए मुझे कुछ भी सुबह तो मजनू बन रहे थे अब साधु क्यों बन गए..?

बन्दर- अरी भाग्यवान! जरा चुप भी रह लिया कर।

पूरे दिन किच-किच करती रहती हो।

बन्दरिया- हाँ-हाँ! क्यों नहीं मैं ही ज्यादा बोलती हूँ।

पूरा दिन तुम्हारे परिवार की देखरेख करती हूँ, तुम्हारे बच्चों के आगे-पीछे दौड़ती रहती हूँ। इसने उसकी टांग खींची, उसने इसका कान खींचा, सारा दिन झगड़े सुलझाती रहती हूँ।

बन्दर- अब बस भी कर मुँह बन्द करेगी तभी तो मैं कुछ बोलूँगा। गया था मैं तेरे लिए पकवान लाने शर्मा जी की छत पर। रसोई की खिड़की से एक आलू का परांठा झटक भी लिया था मैंने पर तभी शर्मा जी की बड़ी बहू की आवाज सुनाई पड़ी

अरी अम्मा जी! अब क्या बताऊँ ये और बच्चे नाश्ता कर चुके हैं। मैंने भी खा लिया है और आपके लिए भी एक परांठा रखा था मैंने पर खिड़की से बन्दर उठा ले गया। अब क्या करूँ फिर से चुल्हा चौंका तो नहीं कर सकती मैं। आप देवरानी जी के वहाँ जाकर खा लें।

अम्मा ने रुँधे से स्वर में कहा-पर मुझे दवा खानी है बेटा !

बहू ने तुरन्त पलटकर कहा-तो मैं क्या करूँ? अम्मा जी! वैसे भी आप शायद भूल गयीं हैं आज से आपको वहीं खाना है। एक महीना पूरा हो गया है आपको मेरे यहाँ खाते हुए।

देवरानी जी तो शुरु से ही चालाक है वो नहीं आयेंगी आपको बुलाने। पर तय तो यही हुआ था कि एक महीना आप यहाँ खायेंगी और एक महीना वहाँ।

अम्मा जी की आँखों में आँसू थे वे बोल नहीं पा रहीं थीं।

बड़ी बहू फिर बोली-ठीक है अभी नहीं जाना चाहती तो रुक जाईये। मैं दो घण्टे बाद दोपहर का भोजन बनाऊँगी तब खा लीजिएगा।

बन्दर ने बन्दरिया से कहा- भाग्यवान ! मुझसे यह सब देखा नहीं गया और मैंने परांठा वहीं अम्मा जी के सामने गिरा दिया।

बन्दरिया की आँखों से आँसू बहने लगे। उसे अपने बन्दर पर बड़ा गर्व हो रहा था और बोली- ऐसे घर का अन्न हम नहीं खायेंगे जहाँ माँ को बोझ समझते हैं। अच्छा हुआ जो हम इन्सान नहीं हुए। हम जानवर ही ठीक हैं।

बिहार की राजनीतिक और राबड़ी देवी...

गोपेन्द्र कुमार सिन्हा गौतम

बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री और वर्तमान बिहार विधान परिषद में नेता प्रतिपक्ष श्रीमती राबड़ी देवी बिहार के राजनीतिक सिरमौर बनने वाली अकेली महिला हैं। जिनका जन्म 1 जनवरी 1956 गोपालगंज में पिता शिवप्रसाद यादव के घर हुआ था। 17 वर्ष की आयु में सन् 1973 में इनकी शादी लालू प्रसाद यादव से हुई थी। लालू प्रसाद यादव के साथ रहकर लगातार ये बिहार की राजनीति पर अपने किचन से नज़र रखती थीं। हालांकि कुछ लोगों का कहना है कि उन्हें राजनीति से कुछ लेना देना नहीं था। पर यह बात नहीं झूठलाई जा सकती कि जिसके पति मुख्यमंत्री की कुर्सी तक पहुंचे हुए हैं उनकी पत्नी को राजनीति की एबीसीडी भी नहीं आती हो! ऐसे बात करने वाले लोग सिर्फ और सिर्फ दुर्भावना वश कहते हैं।

फिर भी जो भी हो स्वतन्त्र भारत में बिहार प्रान्त की पहली महिला मुख्यमन्त्री बनने का गौरव श्रीमती राबड़ी देवी ने हासिल किया। 25 जुलाई 1997 वह ऐतिहासिक दिन था जिस दिन बिहार के राजगद्दी पर अपने पति के विरासत को संभालने के लिए सीधे किचन से निकलकर राजभवन पहुंच कर अपने नेतृत्व में सरकार बनाने की दावा प्रस्तुत कर दी और बिहार की मुख्यमन्त्री के कुर्सी पर काबिज हो गईं। मुख्यमंत्री का ताज उन्हें कोई उपहार में नहीं बलिक तत्कालिक मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव के द्वारा इस्तीफा देने से उपजे परिस्थितियों के फलस्वरूप विधायक दल की बैठक में सर्वसम्मति से श्रीमती राबड़ी देवी को अपना नेता चुनने के बाद मिला। राबड़ी देवी को विधायक दल के नेता चुनने में अहम योगदान लालू प्रसाद यादव ने दिया था। उन्होंने अपने ऊपर कसती शिकंजा को ही अपना ढाल बना लिया और पहली बार एक महिला को बिहार की कुर्सी पर पहुंचाने का ऐतिहासिक और साहसिक निर्णय कर सभी राजनीतिक जानकारों चौका दिया था। जहां लोग उम्मीद लगाए बैठे थे लालू प्रसाद यादव को प्रधानमंत्री की कुर्सी की ओर बढ़ते कदम को रोककर सियासी चक्रव्यू में मात देने के लिए और उनके राजनीति को हमेशा हमेशा के लिए जमींदोज करने के इरादे से कुछ अफसरों से मिलकर उनके विरोधी व विपक्षियों ने उनके पांव में बेड़ी डालने की भरपूर कोशिश की। लेकिन जो लोग हौसलों की उड़ान भरते हैं भला उन्हें कौन रोकता है उन्होंने उसका काट राबड़ी देवी को बिहार के मुख्यमंत्री बना कर प्रस्तुत किया और खुद आगे चलकर बिहार के राजनीति से आगे भारत सरकार में केंद्रीय रेल मंत्री तक पहुंचे।

राबड़ी देवी यादव एक ऐसी भारतीय महिला राजनीतिज्ञ हैं, जिन्होंने बिहार के मुख्यमंत्री के रूप में तीन बार सेवा की, इस पद को संभालने वाली पहली और एकमात्र महिला हैं। उन्होंने बिहार विधान परिषद में नेता प्रतिपक्ष की कुर्सी पर भी लंबी अवधि तक काम किया और वर्तमान में वह विधान परिषद के सदस्य और विपक्ष की नेता हैं।

उन्होंने तीन कार्यकाल में मुख्यमन्त्री पद सम्भाला। मुख्यमन्त्री के रूप में उनका पहला कार्यकाल दो साल का रहा जो 25-07-1997

से 11-02-1999 तक चल सका। दूसरे और तीसरे कार्यकाल में उन्होंने मुख्यमन्त्री के तौर पर अपना पाँच साल का कार्यकाल पूरा किया। उनके दूसरे और तीसरे कार्यकाल की अवधि क्रमशः सन् 09-03-1999 से 02-03-2000 और 11-03-2000 से 06-03-2005 रहा। राबड़ी देवी वैशाली के राघोपुर क्षेत्र से तीन बार विधानसभा सदस्य निर्वाचित हुईं।

राबड़ी देवी ने लंबी अवधि तक बिहार का नेतृत्व किया। बिहार के विकास के लिए लगातार काम करती रहीं। विरोधियों के द्वारा लगातार किए जा रहे दुष्प्रचार के बावजूद उन्होंने कभी मुड़ कर पीछे नहीं देखा। वे हमेशा बिना लाग लपेट के उनके दुष्प्रचार का जवाब देती रही। उसका ही परिणाम था कि उन्हें और उनकी सरकार को दोबारा बिहार की जनता ने बहुमत दी और उन्होंने सात वर्ष से अधिक समय तक बिहार की सेवा की। जब उनके विरोधियों को लगा कि यह महिला भी लालू यादव के नक्शे कदम पर चल रही है तो उन्होंने इन्हें भी अपने षड्यंत्र में घसीटा और बदनाम करके बिहार की सत्ता से बेदखल कर दिया। जानकारों का कहना है कि उन्हें सत्ता से दूर रखने के लिए तीन तीन बार राष्ट्रपति शासन का सहारा लिया गया परंतु फिर भी लोग सफल नहीं हो सके और वे सफलतापूर्वक अपना कार्यकाल पूरा कीं। आज भी उनकी पार्टी बिहार में सबसे बड़ी पार्टी के रूप में काबिज है। साथ ही पड़ोसी राज्य झारखंड में उनकी पार्टी सरकार की हिस्सेदार है।

आत्मा की शांति

हनुमान मुक्त

उनकी बहुत इच्छा थी कि वे मरने से पहले एक गाय दान करें। उन्होंने अपनी इच्छा अपने बच्चों को बताई। गाय की कीमत बीस से पच्चीस हजार सुनकर बच्चों ने बात अनसुनी कर दी

वे मर गए।

उनके बच्चों को किसी ने बताया कि मरने वाले की आत्मा की शांति के लिए गाय का दान करना बहुत आवश्यक है।

बच्चे उनकी आत्मा को शांति दिलाना चाहते थे। वे नहीं चाहते कि उनके बाप की आत्मा घर में इधर-उधर भटके। पहले से ही वह बहुत भटक चुकी थी।

उनकी बारहवीं के दिन गौशाला से गाय मंगवाई गई। गोपालक गाय लेकर आ गए। घर पर एक ओर गाय को पकड़कर गोपालक खड़े हो गए। दूसरी और उनकी पत्नी, चारों पुत्र उनकी पत्नियां, बच्चे खड़े हो गए। विधि विधान से गाय को टीका, अक्षत लगाकर उसकी पूजा अर्चना की। हरा चारा गुड़ खिलाया। माला पहनाई।

गाय की रस्सी पकड़कर गाय को गोपालक को दान में दिया। इस सब की अच्छी सी वीडियो बनाई। इसे उनके पुत्रों ने अपने फेसबुक और व्हाट्सएप स्टेटस पर लगाया। इसके ऊपर लिखा। गाय दान -महादान।

स्वर्गीय फलां की स्मृति में गौशाला को गाय दान करते हुए।

गौशाला को उन्होंने गाय की कीमत ग्यारह सौ रुपए दी।

ग्यारह सौ रुपए में उन्होंने अपने पिता की आत्मा को भटकने से बचा लिया।

जब आप घिर जाएं मुसीबतों और चुनौतियों से

शिखर चंद जैन
(jainshikhar6@gmail.com)

जिंदगी में कई बार हम अजीबोगरीब परिस्थितियों में घिर जाते हैं। यह एक ऐसा दौर होता है जब हमारे साथ कुछ भी सही नहीं होता। हमारा हर दांव उल्टा पड़ता है। हमारी हर कोशिश नाकाम होने लगती है और हमारी बातों का लोग हमेशा गलत अर्थ लगाते हैं। ऐसी परिस्थितियों को कैसे हैंडल करें आइए जानते हैं......

खुद को मजबूत बनाएं

जब आप मुसीबतों से घिरे हों तो खुद को मजबूत बनाने की कोशिश करें बजाय उदास होने के। चुनौतियों से गुजरे बिना कोई जिंदगी नहीं जी सकता, यह महत्वपूर्ण बात हमेशा ध्यान में रखें। मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने एक बार कहा था, किसी व्यक्ति को जानने का सही पैमाना यह नहीं है कि वह आराम और सुविधा की स्थिति में कहां खड़ा है। बल्कि यह है कि चुनौतियां और विवादों में घिरने पर वह क्या कर रहा है।

कोशिश ना छोड़ें

माना कि बुरे वक्त में हर प्रयास विफल होता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि आप प्रयास करना ही छोड़ दें और खुद को किस्मत का मारा समझने लगें। थॉमस हेनरी हक्सले ने लिखा है, दुर्भाग्यशाली वे नहीं जिन्होंने प्रयास किया और विफल हो गए। दुर्भाग्यशाली तो वे हैं जो प्रयास ही नहीं कर सके। मार्टिन लूथर किंग ने भी इस संबंध में बहुत अच्छी बात कही है, जीवन में दुखों का प्रवेश एक दुखद घटना है परंतु बिना दुखों के हम जीवन जीने की कला कभी नहीं सीख पाएंगे।

खुद को कोसना बंद करें

कभी-कभी आपको लगता होगा कि दुनिया में सबसे अभागे व्यक्ति आप ही हैं। आपके साथ ही हमेशा गलत होता है और आपकी मेहनत का फायदा आपको कभी नहीं मिलता। लेकिन ऐसा सोचना सर्वथा गलत है। ऐसा होता तो आप वहां तक कैसे पहुंचते जहां तक आज पहुंचे हैं? गौर से सोचेंगे तो पाएंगे कि आपके पास कितनी ही ऐसी चीजें और उपलब्धियां हैं जो दुनिया में बहुतों के पास नहीं है। लाइफ कोच रॉबिन शर्मा ने लिखा है, हो सकता है जिस वक्त आप अपनी स्थिति से चिंतित हों उसी वक्त दुनिया में कहीं कोई माता-पिता अपने बच्चे की मृत्यु का दुख झेल रहे हों, किसी का परिजन दुर्घटना का शिकार हो गया हो, कोई अस्पताल में बीमार पड़ा इलाज के लिए तड़प रहा हो। इसलिए अपनी छोटी सी चुनौती को दुनिया की सबसे बड़ी समस्या ना समझें। किसी ने क्या खूब कहा है।

राजी रहा करो खुदा की रजा में
तुमसे भी मजबूर लोग हैं इस जहां में

सहानुभूति लेना बंद करें

कई लोग जरा भी मुसीबत आते ही सबके सामने अपने दुखड़े रोना शुरू कर देते हैं। वे खुद को दुखी दिखाकर लोगों से सहानुभूति और मदद की उम्मीद करते हैं। ऐसे लोग भूल जाते हैं कि इस दुनिया में किसी को आपके दुख दूर करने या सुनने में कोई दिलचस्पी नहीं। बल्कि हमेशा अपने दुखड़े रोने वाले लोगों से लोग कतराते हैं। जरा सोचिए कि किसी से आपको सहानुभूति के दो बोल मिल भी जाए तो उससे क्या आपकी मुसीबत दूर हो जाएगी? इसलिए बेहतर होगा कि संयत होकर लोगों से सपोर्ट लेने और सलाह लेने के गंभीर और ईमानदार प्रयास करें।

चिंता नहीं चिंतन करें

जब परिस्थितियां आपके नियंत्रण से बाहर चली जाती हैं तो आप चिंता में डूब जाते हैं। जबकि यह चिंता नहीं चिंतन का समय है। चिंता से समाधान नहीं समस्या पैदा होती है। जबकि चिंतन से हल निकलता है। राल्फ वाल्डो इमर्सन ने कहा है, हमारी शक्ति हमारी कमजोरियों से ही उत्पन्न होती हैं। जब तक हमें चुभन महसूस नहीं होती तब तक हम अपनी छुपी हुई शक्तियों को पहचान नहीं पाते। मुसीबत के वक्त आपका दिमाग ज्यादा एक्टिव हो जाता है इसलिए इस स्थिति का फायदा उठाएं और चुनौतियों का बुद्धिमानी से मुकाबला करें। महान विचारक नेपोलियन हिल ने लिखा है, हमारा दिमाग इस्तेमाल से ही विकसित होता है। सुस्त बैठे रहने से इसमें जंग लग जाती है। जाहिर है मुसीबतें हमारे दिमाग को एक्टिव करने का काम करती हैं।

लघुकथा

मुकेश कुमार ऋशि वर्मा

पौष की सुबह

पौष की सुबह थी। दो दिन पहले ही भारी कोहरे के बीच भीषण बर्फबारी व ओलावृष्टि हुई थी। परंतु आज सूर्यदेव बादलों के बीच से कभी-कभी दर्शन दे रहे थे। वो अपने खेत की मेड पर बैठा एक टक खेत को देखे जा रहा था।

दो दिन पहले तक खेत हरा-भरा, लहलहा रहा था, लेकिन आज उजड़कर सपाट मैदान हो गया था। उसकी फसल को आवारा गौ एक रात में ही चट कर गईं। वैसे वह रात-दिन खेत पर ही रहकर खेत की रखवाली करता था, पर दो दिन से मौसम जानलेवा हो गया था, इसलिए उसने घर पर रहना ही ठीक समझा।

खेत के उजड़े दृश्य को देखकर उसका हृदय रो रहा था। उसे एक-एक पल याद आने लगा। कैसे उसने महंगा खाद-बीज साहूकार से ब्याज पर पैसे उधार लेकर खरीदे थे। उस समय बाजार में खाद की कालाबाजारी चरम पर थी, इसलिए तिगुनी कीमत पर उसने खाद खरीदा था। हाड़तोड़ ठंड में फसल सींची थी। डीजल महंगा होने से ट्रैक्टर की दोगुनी जुताई भी दी थी। इन विदेशी नस्ल के सांडों और गायों ने उसका सत्यानाश कर दिया।

वो पिछले पांच साल से कभी खेतों पर कटीले तार लगाता है तो कभी झोपड़ी डालकर चौबीसों घंटे वहीं चौकीदार बन कर खड़ा हो जाता है। लेकिन जैसे ही मौसम अपना रौद्र रूप दिखाता है, तब कुछ समय के लिए उसे मजबूरन खेत छोड़ना पड़ता है और फिर आती है एक दुःखद संदेश लेकर पौष की सुबह...।

अन्तर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस 21 फरवरी

नीरज कृष्ण

'मैं अच्छा वैज्ञानिक इसलिए बना, क्योंकि मैंने गणित और विज्ञान की शिक्षा मातृभाषा में प्राप्त की थी।'
डॉ कलाम (पूर्व राष्ट्रपति)

हम विचार करें कि जब भारत में अंग्रेजी नहीं थी, तब हमारा देश किस स्थिति में था। हम अत्यंत समृद्ध थे, इतने समृद्ध कि विश्व के कई देश भारत की इस समृद्धि से जलन रखते थे। इसी कारण विश्व के कई देशों ने भारत की इस समृद्धि को नष्ट करने का उस समय तक षड्यंत्र किया, जब तक जे सफल नहीं हो गए।

स्कूल के दिनों में हम में से ज्यादातर लोगों को लगता था कि हिन्दी हमारी मातृभाषा है लेकिन बड़े होने पर पता चला कि भारत की कोई मातृभाषा नहीं, ये विविधताओं का देश है यही भारत की खूबसूरती है। यहां 1365 भाषाएं बोली जाती हैं। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, विश्व में बोली जाने वाली कुल भाषाएं लगभग 6900 है। इनमें से 90 फीसद भाषाएं बोलने वालों की संख्या एक लाख से कम है। दुनिया की कुल आबादी में तकरीबन 60 फीसदी लोग 30 प्रमुख भाषाएं बोलते हैं, जिनमें से दस सर्वाधिक बोले जानी वाली भाषाओं में जापानी, अंग्रेजी, रूसी, बांग्ला, पुर्तगाली, अरबी, पंजाबी, मंदारिन, हिंदी और स्पैनिश है।

2011 की जनगणना के अनुसार, केवल 10.4 प्रतिशत भारतीय अंग्रेजी बोलते हैं और इनमें से अधिकांश के लिए यह दूसरी, तीसरी या चौथी भाषा है। आश्चर्य नहीं कि केवल 0.02 प्रतिशत भारतीय ही अपनी पहली भाषा के रूप में अंग्रेजी बोलते हैं। एक दशक बाद भी इस संख्या में बहुत बदलाव होने की संभावना नहीं है। फिर हमें स्थानीय भाषा के नवोन्मेषकों के लिए समान अवसर क्यों नहीं उपलब्ध कराना चाहिए, जो हमारी 90 प्रतिशत आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं।

मातृभाषा किसी भी इंसान के लिए गर्व की वस्तु होती है। मातृभाषा उसे अपने हाव, भाव और अपने आप को दूसरों के सामने रखने का हथियार प्रदान करती है। मातृभाषा एक ऐसी भाषा होती है जिसे सीखने के लिए उसे किसी कक्षा की जरूरत नहीं पड़ती। मातृभाषा उसे स्वतः ही अपने परिजनों द्वारा उपहार स्वरूप मिलती है। जन्म लेने के बाद मानव जो प्रथम भाषा सीखता है उसे उसकी मातृभाषा कहते हैं। मातृभाषा, किसी भी व्यक्ति की सामाजिक एवं भाषाई पहचान होती है। लेकिन मानव समाज में कई दफा हमें मानवाधिकारों के हनन के साथ-साथ मातृभाषा के उपयोग को गलत भी बताया जाता है। ऐसी ही स्थिति पैदा हुई थी 21 फरवरी 1952 को बंग्लादेश में। दरअसल 1947 में भारत के विभाजन के बाद पाकिस्तान ने पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में उर्दू को राष्ट्रीय भाषा घोषित कर दिया था। लेकिन इस क्षेत्र में बांग्ला और बंगाली बोलने वालों की अधिकता ज्यादा थी। और 1952 में जब अन्य भाषाओं को पूर्वी पाकिस्तान में अमान्य घोषित किया गया तो ढ़ाका विश्वविद्यालय के छात्रों ने आंदोलन छेड़ दिया। आंदोलन को रोकने के लिए पुलिस ने छात्रों और प्रदर्शनकारियों पर गोलियां चलानी शुरु कर दी जिसमें कई छात्रों की मौत हो गई। अपनी मातृभाषा के हक में लड़ते हुए मारे गए शहीदों की ही याद में ही आज के दिन को स्मृति दिवस के रूप में भी मनाया जाता है।

आज विश्व में ऐसी कई भाषाएं और बोलियां है जिनका संरक्षण आवश्यक है लोकभाषाओं की चिंता इसलिए जरूरी है कि ये हमारी विरासत का एक भाग हैं और हमारी थाती हैं और इनमें जो भी कुछ सुंदर और श्रेष्ठ रचा जा रहा है, उसे सहेजकर रखा जाना चाहिए। इसीलिए यूनेस्को महासभा ने नवंबर 1999 में दुनिया की उन भाषाओं के संरक्षण और संवर्धन की ओर दुनिया का ध्यान आकर्षित करने के लिए साल 2000 से प्रति वर्ष 21 फरवरी को अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस मनाने का निश्चय किया जो कहीं न कहीं संकट में हैं।

किसी भी राष्ट्र या समाज के लिए अपनी मातृभाषा अपनी पहचान की तरह होती है। इसको बचाकर रखना बेहद आवश्यक होता है। अगर हम भारत की बात करें तो यहां हर कुछ कदम पर हमें बोलियां बदलती नज़र आएंगी। हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा जरूर है लेकिन इसके साथ ही हर क्षेत्र की अपनी कुछ भाषा भी है जिसे बचाकर रखना बेहद जरूरी है।

मातृभाषा हमें राष्ट्रीयता से जोड़ती है और देश प्रेम की भावना उत्प्रेरित भी करती है। मातृभाषा

ही किसी भी व्यक्ति के शब्द और संप्रेषण कौशल की उद्‌गम होती है। एक कुशल संप्रेषक अपनी मातृभाषा के प्रति उतना ही संवेदनशील होगा जितना विषय-वस्तु के प्रति। मातृभाषा व्यक्ति के संस्कारों की परिचायक है। मातृभाषा से इतर राष्ट्र के संस्कृति की संकल्पना अपूर्ण है। मातृभाषा मानव की चेतना के साथ-साथ लोकचेतना और मानवता के विकास का भी अभिलेखागार होती है।

शब्दों के अस्मिता की पड़ताल के दौरान लोक के अभिलेखागार को देखा जा सकता है। कबीर ने लिखा 'चलती चक्की देख कर, दिया कबीरा रोए, दो पाटन के बीच में, साबुत बचा न कोए'य यहां कबीर का यह दोहा अभिलेखागार है उस लोक का जहां चक्की का अस्तित्व था। अर्थात अब घरों में चक्की भले न मिले लेकिन उसका अनुभव भाषा के माध्यम से मिल जाएगा। भाषा ही हमें बता रही होती है कि कभी हमारे घरों में चक्की हुआ करती थी जिससे अनाज पिसा जाता था।

हम लोग अपनी प्रकृति से सीखते गए, उसको अभिव्यक्ति करते गए, उसको संप्रेषित करते गए क्योंकि हमको पता था कि अपने आने वाली पीढ़ियों को अपने अनुभव देना आवश्यक है। हम द्वार पर पानी दवारते हैं, दवारना शब्द को जायसी अपनी रचना में इस्तेमाल करते हुए 'दवंगरा' कहते हैं। पहली वर्षा को भी 'दवंगरा' कहा जाता है। इस प्रकार यह सब उस समय की लोक चेतना को प्रदर्शित करता है।

किसी भी समाज की स्थानीय भाषा (मातृभाषा) उस समाज के संस्कृति की परिचायक ही नहीं बल्कि आर्थिक संपन्नता का आधार भी होती है। मातृभाषा का नष्ट होना राष्ट्र की प्रासंगिकता का नष्ट होना होता है। मातृभाषा को जब अर्थव्यवस्था की दृष्टि से समझने की कोशिश करते हैं तो यह अधिक प्रासंगिक और समय सापेक्ष मालूम पड़ता है। किसी भी समाज की संस्कृति समाज के खानपान और पहनावे से परिभाषित होती है, यही खानपान और पहनावा जब अर्थव्यवस्था का रूप ले लेता है तो यह ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने लिखा है- 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल, बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटन न हिय के सूल'। अर्थात मातृभाषा के बिना किसी भी प्रकार की उन्नति संभव नहीं है। भारतेंदु जब यह कविता लिख रहे हैं तो वह सिर्फ कवि नहीं बल्कि नवजागरण के चिंतक भी हैं। नवजागरण मतलब समाज को नए तरीके से जगाने की प्रक्रिया। भारतेंदु उस समय के भारत को जगाने का प्रयास कर रहे थे, जो सोया हुआ था। देश को जगाने की चिंता में उनको 'निज भाषा की', मातृभाषा की चिंता हो रही थी क्योंकि मातृभाषा ही उनकी अस्मिता है, उनके पूर्वजों का अनुभव है। इसलिए राष्ट्र का निर्माण बिना मातृभाषा के संभव नहीं हो सकता।

भारतीय नवजागरण की चिंता में भाषा की चिंता पहली चिंता थी। यह चिंता केवल भारतेंदु की नहीं थी बल्कि राजा राममोहन राय, महात्मा गांधी, तिलक और दयानंद सरस्वती की भी थी। दयानंद सरस्वती के सत्यार्थ प्रकाश का 10वां नियम ही 'हिंदी भाषा को बढ़ावा दिया जाए' पर आधारित है। जिस भी देश में नवजागरण का आह्वान किया गया है उस देश में भाषा के संरक्षण की बात कही गई है। बिना मातृभाषा के आप अपने अनुभव को, अपनी अस्मिता को सुरक्षित नहीं कर सकते।

अतः मातृभाषा के महत्व को इस रूप में समझ सकते हैं कि अगर हमको पालने वाली, 'माँ' होती हैय तो हमारी भाषा भी हमारी माँ है। हमको पालने का कार्य हमारी मातृभाषा करती है इसलिए इसे 'मां' और 'मातृभूमि' के बराबर दर्जा दिया गया है।

ब्रिटेन की एसेक्स यूनिवर्सिटी की भाषाविद्‌ मोनिक श्मिड कहती हैं कि जैसे ही आप दूसरी जबान सीखते हैं, तो उसका आपकी मातृभाषा से मुकाबला होने लगता है। उन्होंने पाया है कि बच्चों में अपनी जन्मजात भाषा छोड़कर दूसरी जबान सीख लेने की बातें आम हैं। वजह साफ है किसी बच्चे का दिमाग नई चीज ज्यादा आसानी से सीखता है। पुरानी बातें भूलना उसके लिए आसान होता है। 12 साल की उम्र तक किसी भी बच्चे की भाषा में बुनियादी बदलाव लाया जा सकता है। यानी वो अपनी जन्मजात भाषा को पूरी तरह से भूल सकता है। अगर किसी बच्चे को नौ साल की उम्र तक उसकी पैदाइश वाले देश से हटाकर दूसरे देश में बसा दिया जाए, तो वो पूरी तरह से अपनी मातृभाषा भूल जाता है।

लेकिन, बड़ों का अपनी भाषा को पूरी तरह भुला देना असामान्य बात है, जो कम ही देखने को मिलती है। लोग अपनी भाषा बहुत दुख पाने की वजह से ही भूलते हैं। मोनिका श्मिड ने दूसरे विश्व युद्ध के दौरान जर्मनी छोड़ कर ब्रिटेन और अमरीका में बसने वाले यहूदियों पर रिसर्च की। मोनिका ने पाया कि उनकी भाषा पर इस बात का फर्क नहीं पड़ा था कि वो कितने लंबे वक्त से अपने वतन से दूर थे।

मातृभाषा की याद हमारा जन्मजात गुण होता है। जिन लोगों की भाषा पर पकड़ अच्छी होती है, वो लोग बेहतर तरीके से दोनों जबानों में ताल-मेल बना लेते हैं। वहीं, कुछ लोगों के लिए ये ताल-मेल

बैठा पाना मुश्किल होता है। मोनिका श्मिड कहती हैं कि दो भाषाएं आने पर हमें अपने जहन में ही कंट्रोल मॉड्यूल बनाना पड़ता है। जो आसानी से दो भाषाओं को वक्त के हिसाब से इस्तेमाल कर सके। ऐसे तमाम लोग मिल जाएंगे, जो अपनी मातृभाषा बोलने वालों के बीच होते हैं, तो जन्मजात जबान बोलते हैं। वहीं, जब वो दूसरे देश के लोगों के साथ होते हैं, तो उनकी भाषा बोलते हैं। दोनों के बीच जल्दी-जल्दी बदलाव भी वो कर लेते हैं। वैसे इंसान बड़े आराम से एक से दूसरी भाषा सीख लेता है और बोलने लगता है। ये हमारी खूबी है कि हम नए माहौल के हिसाब से खुद को ढाल लेते हैं।

यह सर्वकालिक सत्य है कि कोई भी देश अपनी भाषा में ही अपने मूल स्वत्व को प्रकट कर सकता है। निज भाषा देश की उन्नति का मूल होता है। निज भाषा को नकारना अपनी संस्कृति को विस्मरण करना है। जिसे अपनी भाषा पर गौरव का बोध नहीं होता, वह निश्चित ही अपनी जड़ों से कट जाता है और जो जड़ों से कट गया उसका अंत हो जाता है। आज हम जाने अनजाने में जिस प्रकार से भाषा के साथ मजाक कर रहे हैं, वह अभी हमें समझ में नहीं आ रहा होगा, लेकिन भविष्य के लिए यह अत्यंत दुखदायी होने वाला है।

लॉरा कहती हैं कि अपनी मातृभाषा भूलना कोई बहुत बुरी बात नहीं। लोग नई जबानें सीख रहे हैं, क्योंकि ये नई भाषा उन्हें नई चुनौतियों से निपटने में मदद कर सकती है। भाषा के लिहाज से अपनी मातृभाषा में कमजोर होना कोई बुरी बात नहीं। और अगर आप कुछ शब्द भूल रहे हैं, तो घर का एक चक्कर लगा लें। पुरानी बोलियां और मुहावरे ताजा हो जाएंगे।

(कविता)

व्यग्र पाण्डे

वे आँखें

जो आँखें देख चुकी हों
पास से अपार दुःख
जिनने माँ-बाप
कई आत्मीयजनों को
रुख़सत किया हो
अपनी नज़रों के सामने
वे आँखें
जो बहा चुकी हों
अनगिनत सैलाव
उनने छोड़ दिया है अब
छलकना खुद से बहना
थम सी गयी हैं
रीते तालाब की, नहरों की तरह।

माँ

विनोद प्रसाद

आज कक्षा में उसे मैथिली शरण गुप्त की कविता 'माँ कह एक कहानी' का पाठ पढ़ाया गया। आया के संरक्षण में पली उस मासूम को यह कोई परीकथा जैसी लगी। माँ की ममता से अनजान वह किसी काल्पनिक पात्र में खो गई।

उसके घर में माँ तो नहीं एक मॉम कभी-कभी दिखाई देती हैं। क्योंकि सुबह आया उसे तैयार कर देती है। उसके ड्राइवर अंकल स्कूल छोड़ने जाते हैं और छुट्टी के बाद वापस ले आते हैं। रात में आया ही उसे खाना खिलाकर सुला देती है।

जब उसे नींद नहीं आती, तब वह देखती है कि रात ढले क्लबों और किटी पार्टियों में मस्ती कर वही मॉम लड़खड़ाते हुए कदमों से घर लौटती है। वह कभी चाहकर भी पूछ न सकी कि 'राजा था या रानी'। क्योंकि तीन इक्कों के सामने राजा रानी की जोड़ी नहीं चलती।

डैड के गले में बाहें डालकर अपने कमरे की ओर जाती हुई मॉम को देखकर लगता है कि उनका वात्सल्य कहीं मर गया है। उसका मन वितृष्णा से भर जाता है। अपने नन्हें मन में वह संकल्प लेती है कि वह इन संदर्भों की पुनरावृत्ति नहीं होने देगी, जिनमें उसका शैशव बीता। वह कहानियां/लोरियां सुनाने वाली माँ बनना चाहती है...। मॉम नहीं!

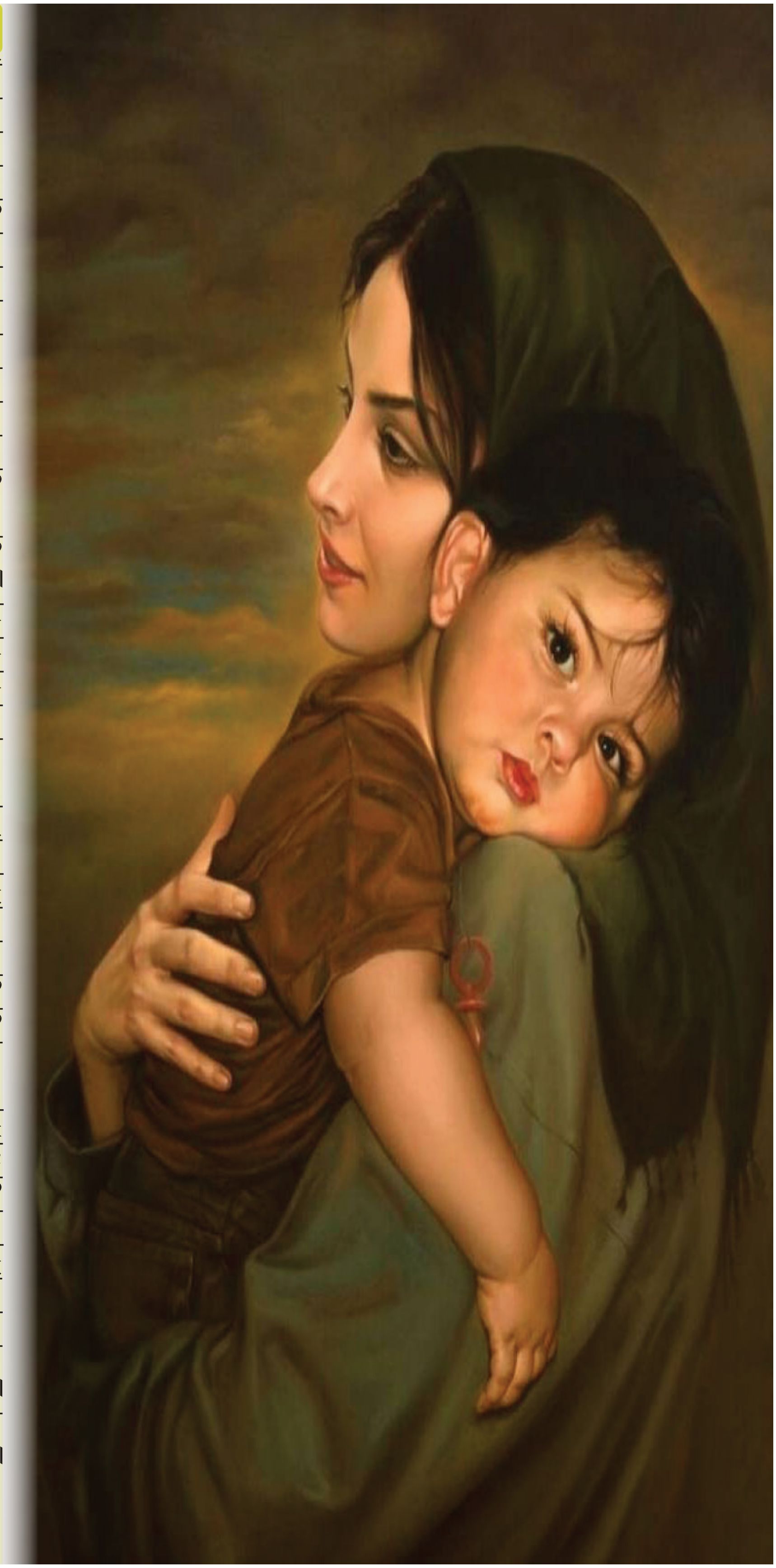

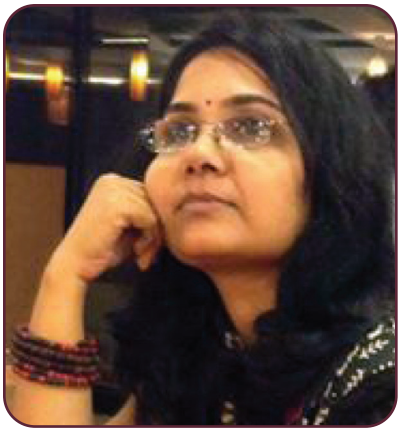

प्रीत के बोल

'प्रीति अज्ञात'

अहमदाबाद, गुजरात

mail: preetiagyaat@gmail.com

संस्थापक-संपादक: हस्ताक्षर

https://hastaksher.com

Co Founder Karambhoomi, Ahmedabad

प्रेम है, तो उम्मीद भी है!

प्रेम, रात के काले साए को अपनी रोशनी से जगमग कर देने वाला ऐसा अनोखा मनमोहक जादूगर है जिसकी अदृश्य टोपी में खुशियों के सैकड़ों उत्साही खरगोश सरपट दौड़ते नज़र आते हैं। यह आसमां से झांकता वो दूधिया चाँद भी है जो बेहद खूबसूरत और सारे जहाँ से निराला है। भले ही यह कभी पूरा, कभी आधा और कभी टिम-टिमाकर गायब हो जाता है लेकिन अपनी उपस्थिति का अहसास सदैव ही बनाए रखता है।

यह रमजान की ईद है, विवाहिताओं का करवा-चौथ है। प्रेमियों की स्वप्निल उड़ान है। रात की नदी में डूबकर इठलाता, झिलमिलाता दीया है। बच्चे की उमंगों भरी मुस्कान है। स्याह अंधेरे के आदी मुसाफिर की आंखों में अचानक भरी चमकीली, सुनहरी उम्मीद है। यह अहसास इतना लुभावना और आकर्षक है कि मन पूछ बैठता है, 'चाँद, तुम 'प्रेम' हो या 'प्रेम' तुम चाँद हो?'

प्रेम, दो जोड़ी आंखों से झांकता एक अदद सपना भी है। कहते हैं, प्रेम पाने नहीं खोने का नाम है। प्रेम दो पावन दिलों के एक हो जाने का नाम है। प्रेम का हर रंग सच्चा, हर रूप अच्छा पर प्रेम बेसबब कितनी ख्वाहिशें जगाता है! प्रेम, उदास रातों में अनगिनत तारे गिनाता है। प्रेम, यादें है, अहसास है, खुशी के छलकते आँसू है, उदासी की घनघोर घटा है, दर्द का बहता दरिया है, फूल है, खुश्बू है, मुट्ठी में भरा आसमान है, बेवजह उभरती मासूम मुस्कान है। प्रेम कभी किसी बच्चे की तरह शैतान लगता है तो कभी उसका ही मासूमियत भरा भोला चेहरा भी ओढ़ लेता है।

कैसे परिभाषित करें इसे? शायद यह चंद मखमली शब्दों में लिपटी गुदगुदाती, नर्म कोमल अनुभूति है। स्पर्श के बीज से उगी उम्मीद की लहलहाती फसल है। आँखों के समंदर में डूबती कश्ती की गुनगुनाती पतवार है। प्रेम, अकेलेपन का साथी है, दर्द है तो दवा भी। इसके बिना जीवन कैसा? यह तो प्रकृति की रग-रग में बसा है। भूखे को रोटी से प्रेम होता है और अमीर को पैसे से। माँ का प्रेम उसका बच्चा और बच्चे का प्रेम इक खिलौना। प्रेम हर रूप, हर रंग में अपनी उपस्थिति दर्ज करता

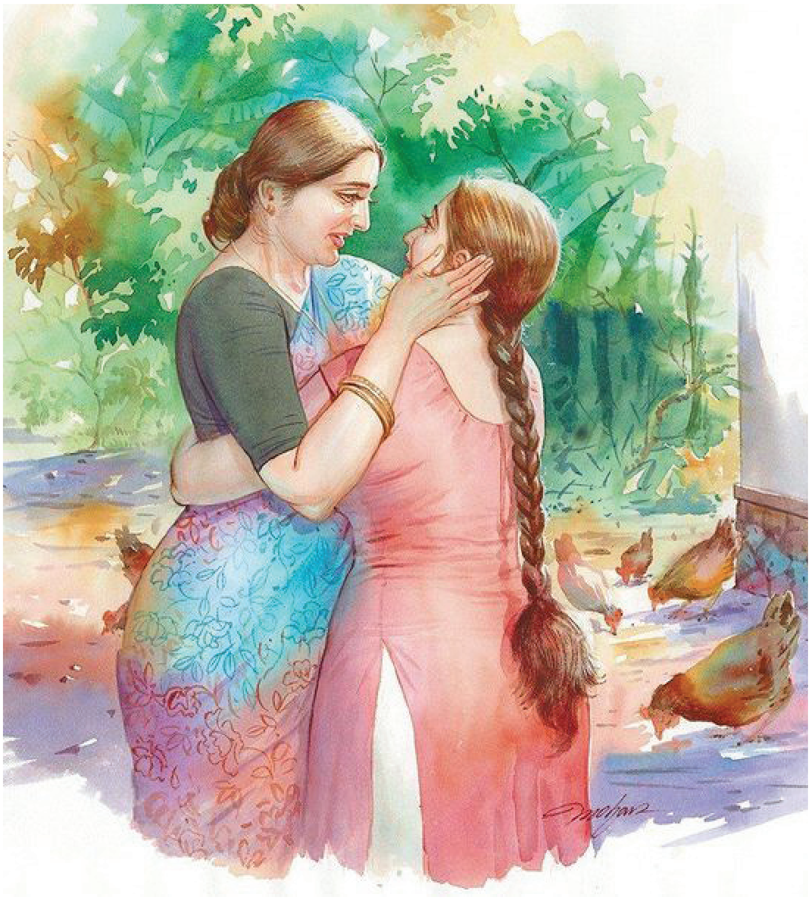

आया है। हर विशेषण इसके साथ जुड़ा है और इसके असर से कोई भी नहीं बच सका है।

तभी तो सभी के जीवन में कोई न कोई ऐसा इंसान अवश्य ही होता है जिससे अपार स्नेह हो जाता है, दिल उसे हमेशा प्रसन्न देखना चाहता है और हर दुआ में उसका नाम खुद-ब-खुद शामिल होता जाता है। यद्यपि यह बिल्कुल भी आवश्यक नहीं कि उस इंसान की भावनाएं भी आपके प्रति ठीक ऐसी ही हों। ऐसा होना अपेक्षित भी नहीं होता है पर फिर भी कभी-कभी कुछ बातें गहरे बैठ जाती हैं। दुःख देती हैं लेकिन धड़कनें तब भी हर हाल में उसी लय पर थिरकती हैं। उसकी तस्वीर को घंटों निहार कभी खुशी तो कभी उदासी के गहरे कुएं की तलहटी तक उतर जाती हैं। न जाने यह बेवकूफी है, पागलपन या इस शख्स का नितांत एकाकीपन कि अब तक वो यादें साँसों से लिपटी रहती हैं जब उसने अपने जीवन का प्रथम और अंतिम स्नेहिल स्पर्श किसी का हाथ थाम महसूस किया था। क्या पल भर की मुलाकात, चंद अल्फाज और एक प्यारी-सी हँसी भी प्रेम की परिभाषा हो सकती है? होती ही होगी! वरना कोई इतने बरस, किसी के नाम यूँ ही नहीं कर देता! तुम इसे इश्क/मोहब्बत/प्यार/प्रेम या कोई भी नाम क्यों न दे दो, इसका अहसास वही सर्दियों की कोहरे भरी सुबह की तरह गुलाबी ही रहेगा। इसकी महक जीवन के तमाम झंझावातों, तनावों और दुखों के बीच भी जीने की वजह दे जाएगी.

'इश्क' के लिए तो एक पल ही काफी है, जनाब! उसके बाद जो होता है वो तो इसको संभालकर रखने की रवायतें हैं। यद्यपि सारे प्रेम सच्चे हैं पर स्त्री-पुरुष के मध्य हुए प्रेम को ओवररेटेड किया गया है। सामाजिक प्रतिष्ठा से इसे जोड़ना प्रेमी युगल के सहज रिश्ते में उलझन, तनाव उत्पन्न कर देता है। परिवार, मान-मर्यादा की दुहाई दो हँसते-खेलते इंसानों का जीवन तबाह भी कर देते हैं।

वैसे देखा जाए तो, 'प्रेम' दीये की फड़फड़ाती लौ की तरह प्रारम्भ में और अंतिम समय में तीव्रता से अपनी चमक के साथ महसूस होता है परन्तु बीच की सारी प्रक्रिया तो इस लौ को जीवित बनाए रखने की जद्दोजहद में ही निकल जाती है। कभी भावनाओं का तेल खत्म होता दिखाई देता है तो कभी बाती समय की आंधियों से जूझती थकी-हारी, निढाल नज़र आती है। यदि दोनों समय रहते अपने स्नेह को साझा करते रहें तो क्या मजाल कि उनकी दुनिया रोशन न हो! पर होता यह है कि तेल और बाती दोनों ही शेष रह जाते हैं और जोत जलती ही नहीं! धीरे-धीरे यह घुप्प अंधेरा रिश्तों को लीलने लगता है। जब बात समझ आती है तब समेटने को मात्र अफसोस रह जाता है लेकिन यह उत्तरदायित्व दोनों का है कि लौ जलती रहे। अन्यथा बाती दीये की उसी परिधि पर मुँह बिसूरे टिकेगी, जलेगी, प्रतीक्षा करेगी और अचानक बुझ जाएगी!

'प्रेम' की सारी बातें बेहद अच्छी हैं पर एक उतनी ही बड़ी खराबी भी है इसमें कि यह आता तो सबके हिस्से है पर ठहरता कहीं-कहीं ही है! आज जबकि सियासी चालों, स्वार्थ और नफरतों के दौर में प्रेम करना सबसे बड़ा गुनाह है। सुनो, प्रेम! तुम तब भी उम्मीद की तरह हम सबके साथ बने रहना!

वेलेंटाइन-डे

रंगनाथ द्विवेदी

'मैं इनकी कोई साधारण पत्नी नहीं, बल्कि इनके युवावस्था के कालखंड की ऐसी अद्वितिय वेलेंटाइन-डे प्रकार की पत्नी हूँ, जो इनके इंतजार करते हुये मोहब्बत के दुखी गुलाब को स्वीकार कर अपने पत्नी होने का सारा लोकतंत्र इनपे लागूकर आनंदित व प्रफुल्लित हूं'। जिस वेलेंटाइन-डे के दिन इन्होंने अपनी-मोहब्बत की जिस ऊर्जा के साथ मुझे प्रपोजकर आ ई लव यू कहा था, आज मैंने उनकी उसी मोहब्बत की ऊर्जा को- 'अपने किचन व गृहस्थ की सौर ऊर्जा में बदलकर प्रतिदिन मैं इनके वेलेंटाइन-डे (14 फरवरी) वाली मोहब्बत के गुलाबीपन को जी रही हूं'।

मुझे लिखते व व्यक्त करते हुए कहीं से भी ये झिझक नहीं हो रही है, कि मैंने 'वेलेंटाइन-डे के की इस भीड़ में से- किसी ऐसे ऐरे-गैरे, नत्थू खैरे गुलाब पकड़े नकली प्रजाति के प्रेमी रूपी उस पति का चयन नहीं किया, जो जीवन को कुछ ही दिनों में अपनी मोहब्बत के नकली गुलाब के कांटों से भर दे'। बल्कि मैंने मोहब्बत के उस- 'वेलेंटाइन-डे रूपी गुलाब का चयन किया है जो मेरी हर धड़कन, हर एक सांस का शाहजहां है और मैं एक पत्नी के तौरपर उनकी मुमताज'। ये वेलेंटाइन-डे और सुर्ख-गुलाब आज एक डिजिटल पर्व है अतः ये पर्व मनाने से पूर्व ये अवश्य जान ले, कि कहीं आपको अपने- 'मोहब्बत का गुलाब पकड़ा रहा प्रेमी वेलेंटाइन-डे मेनिया का चाइनीज पेसेंट तो नहीं', अगर है तो आप अपनी खूबसूरत सी आँखों में ताउम्र ये दर्द के आँसू गुलाब के कांटो की एक ना खत्म होने वाली खराश को जीने के लिये तैयार रहें।

मैंने खुद ये सावधानी बरती है इसलिए मैं खुद को इनके जैसे पति रूपी मोहब्बत के वेलेंटाइन-डे का गुलाब पा धन्य महसूस करती हूं, और मैं जब-जब भी कमरे के दर्पण के सामने सजने-सवरने के लिये खड़ी होती हूं, तो जैसे ये अब भी उसी अपनी १४ फरवरी वाली हूबहू अदा के साथ मुझे अपनी मोहब्बत का गुलाब पकड़ा रहे हों और मैं छुईमुई सी शर्मा उठती हूं-फिर मैं एक-एक कर वे सारे मेकप करती हूं जो एक पत्नी अपने पति के मोहब्बत लिये प्रतिदिन करती है, जो उनकी चाहत का व उनके अधिकार की दुनिया का वास्तविक वेलेंटाइन-डे है, सिंदूर, बिन्दया, अपनी मछली सी खूबसूरत आँखों में काजल और खासकर मेरे गुलाबी होठों की वे लिपस्टिक जिसे देखकर वे आज भी मुझे वे अपना वेलेंटाइन-डे या अपनी मोहब्बत का 14 फरवरी कहते हैं।

तुस्सी ग्रेट हो संजना

रमेश चंद्र

आज गोष्ठी में कुछ ज्यादा ही गहमा-गहमी रही। मुद्दतों बाद ऐसा मुद्दा उछला कि ज्यादातर लोग बिदक गए। साहब सरकारी फरमान सुनाकर शांत थे और शिक्षक थे कि दलील पर दलील दिए जा रहे थे। ये नहीं हो सकता। ऐसा आज तक नहीं हुआ। अब कैसे होगा? हमारा काम स्कूल आए बच्चों को पढ़ाना है। हम घर-घर घूम बच्चे जमा नहीं कर सकते। फिर कामकाजी लोग जो बच्चों से घर का काम कराते हैं वे क्यों भेजने जांय! और जब हम ऐसा कर ही नहीं सकते तो लिख कर कैसे दे दें कि हमारे पोषक क्षेत्र में कोई बच्चा विद्यालय से बाहर नहीं है? होटल-ढाबे, ईंट-भट्ठे पर काम करने वाले, गाय-बकरी चराने और कोयला-लकड़ी बीनने वाले बच्चे भला क्यों कर स्कूल आने लगें? जब तर्कों का तूफान आसमान चढ़ बोलने लगा तो पैंतालीस पार साहब बड़े कातर भाव से रामायण बाबू की ओर देखे। बगल बैठे रामायण बाबू खड़े हुए। 'हम कोशिश तो कर ही सकते हैं। मैं मानता हूँ कि ऐसा अचानक नहीं हो सकता। सबकी अपनी-अपनी समस्याएं हैं। बच्चे मां-बाप के काम में हाथ बंटाते हैं। गाँव में बड़ी आबादी ऐसे लोगों की है जो दो जून की रोटी खातिर सुबह से शाम तक कड़ी मेहनत करते हैं। इनके लिए शिक्षा का कोई मायने नहीं है। लेकिन जरा ये भी तो सोचिए कि ऐसा न करके हम अनपढ़ों की एक बड़ी जमात खड़ा नहीं कर रहे हैं? और, क्या आने वाली पीढियाँ हमें यूं ही माफ कर देंगी? 'रामायण बाबू की बातें तपते रेगिस्तान में सावन की पहली फुहार-सी पड़ीं और शिक्षक वृन्द बैठ गए। रामायण बाबू ने कहना जारी रखा।' देखिए, मैं अति आदर्शवादी नहीं हूँ। मैं मानता हूँ कि रोम एक दिन में नहीं बन सकता। लेकिन मैं ये भी जानता हूँ कि बूंद-बूंद से तालाब भर जाता है। आदमी अगर चलना शुरू कर दे और लगातार चलता रहे तो आखिर मंजिले-मकसूद पर पहुंच ही जाता है। और, रही बात साहब कि तो वे वही कह रहे हैं जो विभाग का निर्देश है। इसमें इनकी अपनी कोई बात नहीं। मैं तो कहता हूं कि देर-सबेर ऐसा कुछ जरूर होगा। तब उन्हें याद रखा जाएगा जो पहल की दिशा में पहला कदम बढ़ाए थे। अब इससे ज्यादा क्या कहूँ? मैं एक सेवा-निवृत्त शिक्षक हूँ जिसे आपने अपना मंत्री बनाया और आज तक बनाए रखा। आपका स्नेह ही शिक्षक समाज तक खींच लाता है। अपनी सेवा-काल में मैंने भी ढेरों नवाचार किए। प्रतिफल भी मिले। आज मेरे पोता-पोती जब कहते हैं कि मेरे दादाजी महामहिम राष्ट्रपति महोदय से सम्मानित हैं तो गर्व से सीना चौड़ा हो जाता है। हम सही दिशा में शुरआत तो कर ही सकते हैं। चौथचन्दा बंद कर हमने कुछ खास नहीं पाया बल्कि बहुत कुछ खोया। अभिभावकों से मिलने और अपने विद्यार्थियों के परिवेश पहचानने का वह बहुत सुंदर माध्यम था। हम फिर हर घर जाएंगे। लोगों से मिलेंगे। शिक्षा का महत्व समझाएंगे। मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ, लोग हमारी बात जरूर मानेंगे और अपने बच्चों को स्कूल भेजेंगे। मैं साहब से भी अनुरोध करूँगा। आप हमारे भाईयों को कम से कम तीन महीने का समय दें। अभी

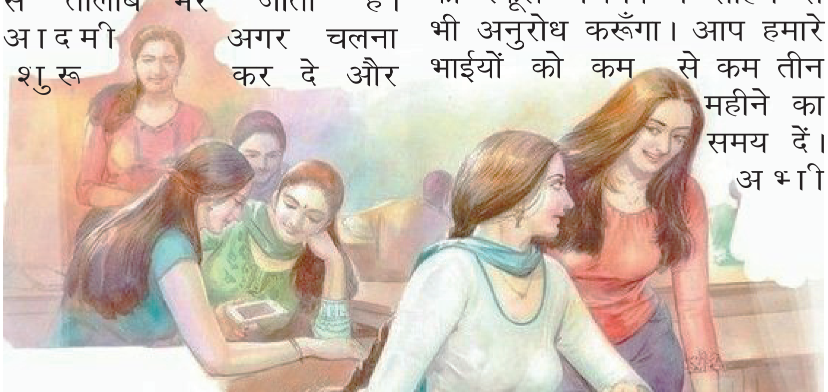

रब्बी-दलहन की फसलें तैयार खड़ी हैं। ये किसान-मजदूर के लिए महत्वपूर्ण मौसम है। माह भर बाद घरों में जब अनाज आ जाएंगे तो लोग इत्मिनान हो जाएंगे। फिर हमारा काम आसान हो जाएगा। रामायण बाबू की

बातें असर कर गईं और इसी के साथ गोष्ठी भी समाप्त हो गई। तय हुआ कि अगले माह से सभी विद्यालय प्रधान इस दिशा में हुई प्रगति से अवगत कराएंगे।

रतनपुर रेलवे हॉल्ट। बहुत कम रेलगाड़ियों का ठहराव यहाँ होता है। स्टेशन से निकल सामने जानिब दक्खिन चलते जाइए तो बलवीरपुर के बगल से एक सड़क गुजरती है। इसे सड़क नहीं पगडंडी ही कहना मुनासिब होगा। आगे ढाई कोस की दूरी पैदल पार करनी पड़ती है। तब जाकर बेनीपुर आता है। बड़े-बुजुर्ग बताते हैं कि कभी कोशी इधर से ही गुजरती थी। कालांतर में नदी ने अपना रुख मोड़ लिया और पीछे छोड़ गई रेत-बालू के बड़े-बड़े टीले। बैर-बबूल के झंझाट कंटीले दरख्तों से बचकर चलना आसान नहीं होता। दियारा क्षेत्र के विस्थापित लोग जब यहाँ आ बसे तो यह इलाका भी आबाद हो गया। सस्ते श्रमिक व कामगारों के लिए यह मुफीद जगह है। यहाँ से निकलती पगडंडी रेलगाड़ी के पहियों पर चलकर पंजाब, लुधियाना का लंबा सफर तय करती है। फसल के नाम पर कुछ खास नहीं होता। अलबत्ता रतनपुर स्टेशन पर तरबूज, खीरा व कंकड़ी बेंचते जो लोग नज़र आते हैं, सब यहीं के हैं। बुधन बाबू सात बजे वाली लोकल से रोज उतरते हैं। सिलसिला पिछले तीन साल से मुसलसल चल रहा है। बेनीपुर पहुंचते-पहुंचते नौ बज जाता है। हजरत यहाँ की पाठशाला में प्रधान शिक्षक हैं। आज राह चलते गुरुगोष्ठी की बातें साथ चल रही थीं। बार-बार हाकिम के हुक्म जेहन में कौंध रहे थे। रामायण बाबू की अपील याद आ रही थी। साथ ही, याद आ रहा था साहब से हुआ मुकर्रर वक्त- महज तीन महीना। अगली गोष्ठी में प्रगति से वाकिफ कराना होगा। गरचे रिपोर्ट बढ़िया न हुआ तो नए साहब की नज़रों में टिक नहीं पाएंगे। फिर क्या होगा? क्या तीस साल की सेवा अकारथ चली जाएगी ..?

'देख बिंदा, चिट्ठी में ऊपर लिखी बातें किसी और से पढ़ा लेना। खास बात ये है कि तुम्हारा पति पहले से अब ठीक है और बढ़िया कमा-धमा रहा है। जबसे पगार बढ़ें हैं, बचत भी बढ़ी है। मईया के लिए गांव पर गाय आ गई है। बाबूजी के लिए कम्बल का पैसा भेज दिया है। अब वे मजे से हैं। तुम्हें नाहक फिक्र कर परेशान होने की जरूरत नहीं है। अबकी दीवाली आएगा तो तुझे बिदा कराकर ले जाएगा। और, ये नीचे की तहरीर भी मैं नहीं पढ़ूंगी। पति-पत्नी की बातें दूसरों से नहीं पढवानी चाहिए। पति से इतना प्यार करती हो तो खुद पढ़ना-लिखना क्यों न सीख लेती? घर-दुआर का काम खत्म कर ढेर सारी लड़कियां तो पढ़ने आती हैं! चिट्ठी की

आखरी पंक्तियों में छुपे आशय का अंदाजा लगा बिंदा मारे शर्म लाल हो गई। फिर दीदी के हाथ से चिट्ठी छीन भाग खड़ी हुई। जाते-जाते बोल गई- दीदी, कल से मैं भी पढ़ने आऊंगी। दीदी ने देखा, आज बिंदा के पैर धरती पर नहीं पड़ रहे थे। फिर पलटीं और आंगन से निकल स्कूल की तरफ बढ़ गईं। बच्चे आने लगे थे। जो आ गए थे वे सफाई में मशगूल थे।

दी दी विद्यालय की सहायक शिक्षिका हैं। बड़े-बुजुर्ग बहनजी बुलाते हैं। उम्र पैंतालीस की रही होगी लेकिन वक्त के

थपेड़ों ने प्रौढ़ावस्था से आगे धकेल दिया है। अलबत्ता आंखों में गजब का तेज है। आवाज में ठसक बदस्तूर कायम है। औसत कद काठी की बहनजी ने अपने कार्य-कौशल से लोगों का दिल जीत लिया है। बहाल होकर आईं तो वापस न गईं। बच्चों के साथ बकरियां भी आती हैं। बच्चे स्कूल में पढ़ते हैं और बकरियां बाहर मैदान में चरती हैं। छुट्टी की लंबी घण्टी बजती है तो बकरियां स्कूल के पीछे जमा हो जाती हैं। फिर सभी साथ लौटते हैं। यहाँ स्कूल में कभी ताले नहीं लगते। टाट-फूस की दीवारों को इसकी जरूरत भी नहीं होती।

प्रार्थना का समय हो चला है। दर्जा चार का बलराम लगातार घण्टी बजा रहा है। बच्चे सारा काम छोड़ कतार में लगने लगे हैं। पहली पंक्ति में वर्ग एक के बच्चे हैं। इनके पीछे दो, तीन,चार और आखिर में पांच के बच्चे खड़े हो जाते हैं। आज सभा संचालन की जिम्मेवारी राधा और लक्ष्मी की है। दोनों आगे बढ़ प्रार्थना शुरू करती हैं। बाकी बच्चे पीछे से दोहराते हैं- 'इतनी शक्ति हमें देना दाता, मन का विश्वास कमजोर हो ना..!' फिर राष्ट्रगान होता है। सामने पीपल पेड़ के नीचे बैठे औरत-मर्द भी खड़े हो जाते हैं। राष्ट्रगान समाप्त कर बच्चों को बैठा दिया जाता है। बुधन बाबू झोली से आज का अखबार निकालते हैं। समाचार पढ़ने की जवाबदेही आज बब्बन व बांके की है। दोनों बारी-बारी से हेड लाइन्स पढ़ते हैं। कहीं अटकते हैं तो दीदी आगे बढ़ मदद करती हैं। लीजिए, समाचार समाप्त हुआ। अब बुधन बाबू बोर्ड पर आज का सुविचार लिखते हैं। बलराम भाग कर घण्टी बजाता है। गोया कि कक्षाएं प्रारंभ हुईं। वर्ग चार, पांच को बुधन बाबू संभालते हैं। दीदी दीगर तीन दर्जों के साथ पीपल पेड़ के नीचे आ जाती हैं। चार घण्टी लगातार चलती है। इसमें भाषा, गणित, समाज और थोड़ा-बहुत विज्ञान पढ़ाए जाते हैं।

टुन..टुन..टुन..! टिफिन हो गई। बच्चे घर भागते हैं। अब आधे घण्टे बाद लौटेंगे। बुधन बाबू गुरुगोष्ठी में हुई तमाम बातें बहनजी से साझा करते हैं। तमाम बच्चों को विद्यालय लाने और इसका पुख्ता प्रमाण लिख कर देने की बात दोहराते हैं। 'श्रीमान, इसमें परेशान होने जैसी कोई बात नहीं दिखती। हमलोग ऐसा आराम से लिख कर दे सकते हैं। आप जरा खड़े होइए। सामने देखिए। तकरीबन सौ घरों की बस्ती में अपना एक स्कूल। कोई अंतर ही नहीं कर सकता कि बस्ती कौन और स्कूल कौन है? फिर, टाट-फुस के घरों में अंतर ही कितना होता है! सब एक जैसे हैं। कहना मुश्किल है कि गांव में स्कूल है या स्कूल में गांव!

माह भर बाद फिर गोष्ठी हुई। साहब समय से आ गए थे। साथ में रामायण बाबू भी थे। हह्ल खचाखच भरा हुआ था। बहुतेरे विभागीय बिंदुओं पर चर्चा चलती रही। जब विद्यालय से बाहर के बच्चों के दाखिले की बात आई तो एक बार फिर सन्नाटा छा गया। होमवर्क नहीं करने वाला विद्यार्थी जैसे अपने गुरु की निगाहों से बचता है, ठीक वैसे ही शिक्षक भी इस मुद्दे से बचना चाहते थे। कोई कुछ बोलने को तैयार नहीं था। साहब की सहमति से रामायण बाबू ने विद्यालय वार प्रगति की समीक्षा शुरू की। लेकिन, सबका एक ही जवाब था- सर, हमने कई बार कोशिश की। घर-घर घूमे। परंतु पोषक क्षेत्र के तमाम बच्चों को दाखिला दिला न सके। एकाध आए भी तो दस-बारह दिन बाद गायब हो गए। क्या करें? बावजूद, हम कोशिश करते रहेंगे। गेहूं की कटनी के बाद फिर जाएंगे। उत्तर इतना ठोस था कि सबके सुर समान हो गए। 'कोई बात नहीं, अभी दो महीने हमारे पास हैं। हमलोग प्रयत्न करते रहें। देर-सबेर सफलता जरूर मिलेगी।' निरीक्षी पदाधिकारी और शिक्षकों के बीच सेतु बन रामायण बाबू बैठ ही रहे थे कि पिछली पंक्ति से कोई हाथ उठा। साहब की नज़र पड़ी। बोले-कौन हैं भाई, कुछ कहना हो तो खड़े होकर कहिए। हाथ उठाने वाले सज्जन खड़े हुए। ये बुधन बाबू थे। सभा-समाज में बहुत कम बोलते थे। नाटे कद-काठी के बुधन बाबू सफेद धोती-कुर्ता पहनते थे। अपनी लंबाई से बड़ी अंगौछी कंधे पर होती। तीन फेरा गले में लपेटने के बाद भी दोनों छोर दो-दो हाथ लटकते रहते। हमेशा हंसते रहते। आज भी हंसते हुए बोले-श्रीमान, हमारे पोषक क्षेत्र में ऐसा कोई भी बच्चा नहीं है जो विद्यालय से बाहर हो। भारी उत्तेजना से सभी चौंके। 'सर, मैं तो लिख कर भी लाया हूँ।' कहते हुए बुधन बाबू ने आगे बढ़ अपना रिपोर्ट थमा दिया। साहब ने गौर से देखा। रिपोर्ट पक्का था। बकायदे मुहर भी लगी थी। बाई तरफ शिक्षिका और दांई तरफ बुधन बाबू के हस्ताक्षर साफ झलक रहे थे। फिर तो गोष्ठी का रुख ही पलट गया। सबकी निगाहें बुधन बाबू पर जम गईं। 'आंय, ये कैसे हो सकता है? आज तक यह हुआ है

जो होगा? बस्ती के तमाम बच्चे स्कूल आ जांय.। घोर आश्चर्य..! कहीं बुधन बाबू बावले तो न हो गए! कोई खुलकर तो कोई दबी जुबान दलीलें देने लगा। तभी पीछे से एक सज्जन फुसफुसाए- सेवा निवृति के कगार पर खड़े हैं। फर्जी रिपोर्ट भारी फेर में डाल देगा। रिटायरमेंट के बाद अधेला पेंशन न मिलेगा। दूसरे सुर मिलाए- सीधे-साधे आदमी हैं। लगता है, डर कर रिपोर्ट दे दिए हैं! तीसरे तनिक जोर देकर बोले-आरे, कुछ भी लिख कर दे देना होता तो क्या हमारे पास कागज का एक टुकड़ा नहीं था? या, कलम की स्याही सुख गई थी? चौथे अपनी अंदाज-ए-गुफ्तगू का अहसास कराते बोले-कुछ भी हो, बुधन भाई हैं होशियार! रिपोर्ट पर अपनी असिस्टेंट का भी सिग्नेचर ले लिए हैं। ऐसे नाजुक मौकों पर हुसैन साहब का हुनर होठों पर आ जाता था। हजरत शायराना अंदाज में बोले- 'हम तो डूबेंगे ही सनम, तुझे भी ले डूबेंगे..! ऐ बुधन भाई, कम से कम अपनी सहायक शिक्षिका का तो ख्याल करते! बेचारी नाहक में नौकरी निछावर कर रही है।' जब तंज के तीरों की रफ्तार थोड़ी धीमी पड़ी तो रामायण बाबू फिर खड़े हुए। शोरगुल शांत होने लगा। सबने देखा, बुधन बाबू का चेहरा सफेद पड़ गया था। सीधा-साधा इंसान आम तौर पर इतना झेल नहीं पाता। बंदा सच होने पर भी सिहर जाता है और आखिर में टूट जाता है। रामायण बाबू कंधे पर हाथ रखते बोले- बुधन भाई, इतनी जल्दबाजी क्या थी? सरकारी काम सोच समझ कर करना चाहिए। रिपोर्ट वापस ले लीजिए। बस्ती के सारे बच्चे जब सचमुच विद्यालय आ जाँय तो फिर बना कर दे दीजिएगा। बुधन बाबू बड़ी विनम्रता से बोले-मंत्री जी, ईमानदारी से कहता हूँ। आप न पतियाते हैं तो चल कर देख लीजिए। एक बार फिर सभा में खामोशी पसर गई। रामायण बाबू फिर टोके- आखिर यह कैसे हो सकता है? अब बारी बुधन बाबू की थी। संयमित स्वर में बोले- श्रीमान, मेरे यहहं कहना मुश्किल है कि गांव में स्कूल है कि स्कूल में गांव है। यह सुनना था कि सभी जोर से ठहाका लगाए और बुधन बाबू की मासूमियत पर तरस खाते बाहर निकल गए। इसके साथ ही आज की गोष्ठी भी समाप्त हो गई। लेकिन साहब और रामायण बाबू देर तक बातें करते रहे।

माह बाद जब कटनी, दंवरी हो गए और घरों में अनाज आ गए तो मुख पर मुस्कान भी आ गई। किसानों के कोठी-बखार भरे तो मेहनत कशों को मजदूरी भी मिली। बस्ती में चूल्हे एक साथ जलने लगे। तवे पर पकती नये गेहूँ की रोटियों की सुगंध छन-छन कर आने लगी। इधर, मुद्दतों बाद ऐसी खबर आई है कि बेनीपुर में चहल-पहल बढ़ गई है। लगता है, किसी बड़े घर में बेटी की बारात आ रही है। पूरा गांव अपने हिस्से का काम निपटाने में लगा है। स्कूल थामे बांस के खम्भों में लाल-पीले रंग लगाए जा रहे हैं। जमीन पर पीली मिट्टी का लेप लग चुका है। कामगार आज काम पर नहीं गए हैं। सब अपने हुनर के हिसाब से कारीगरी में लगे हैं। तोरण द्वार बनाए जा रहे हैं। पांच बिगहिया मैदान की सफाई पहले ही पूरी की जा चुकी है। गाय, भैंस और विशेष कर बकरियों का प्रवेश आज पूर्णतः निषिद्ध है। बिंदा का उत्साह तो देखते बनता है। जबसे दीदी के पास पढ़ने लगी है, पैरों में पंख लग गए हैं। छोटे-छोटे हर्फों को लिखने लगी है। घर का काम खत्म कर सखियों संग रोज पढ़ने आती है। तेंतर, रेशमी और पानकली रंगोली बनाने में लगी हैं। राधा और लक्ष्मी स्वागत गान की तैयारी कर रही हैं। बुधन बाबू बाहर बच्चों संग 'स्वागतम' का बोर्ड लगवा रहे हैं। दीदी भाग-भाग कर लोगों को काम समझा रही हैं। जबसे साहब के आमद की खबर आई है, रात-दिन एक की हुई हैं। साथ में रामायण बाबू भी आ रहे हैं। दियारा क्षेत्र के विस्थापित विद्यालय की तारीख में पहली दफा कोई हाकिम मुआयना करने आ रहे हैं। सो उत्सवी माहौल है। बच्चे साफ-सुथरे कपड़ों में हैं। पीपल पेड़ के नीचे श्रवण कुमार नाटक का अभ्यास चल रहा है। राजा दशरथ का किरदार करता दिनेश बीच-बीच में संवाद भूल जाता है। दीदी दौड़ कर याद कराती हैं। श्रवण कुमार की भूमिका निभाता भुवनेश्वर तो रिहर्सल में ही कमाल ढा रहा है। राजा दशरथ के बाण से बिलखते श्रवण कुमार का दृश्य देख लोग सिहर उठते हैं। बंदा गजब का कलाकार है! पांच चौकी जोड़कर मंच बना है। ऊपर तिरपाल टांगा जा रहा है। रात में नाटक होगा। गैसबत्ती लाने की जिम्मेवारी मनोहर, महंगू और स्वामीनाथ ने ले रखी है। ये रतनपुर रेलवे हह्ल्ट पर खीरा, कंकड़ी बेंचते हैं। बंदे आज सुबह जब धंधे पर निकले तो गांव वालों ने ताकीद की- भईया, बेनीपुर की लाज रखना। टाइम से आ जाना। वैसे बयाना पहले ही दिया जा चुका है। मटिया तेल तो कल का ही आ चुका है जिसे ईमान की तरह हिफाजत में बहनजी के पास रख दिया गया है। सांझ होते

जब गैसबत्ती जलेगी तो देखते बनेगा! सगरी बस्ती अंजोर हो जाएगी। तब शुरू होगा नाटक। झगरू साव बढ़िया झलवहिया हैं। खूब काट-काट कर झाल बजाते हैं। मातबर मियाँ डफाली जैसा ढोलकिया पांच कोस में नहीं है। बंदा आखर धर लेता है तो आखिर तक बेताल नहीं होता। लेकिन एक बड़ा पेंच फंस गया है। अभी तक हारमोनियम मास्टर का इंतजाम नहीं हो पाया है। भरदुल दीगर दोस्तों के साथ ढूंढने निकला है। देखिए, क्या होता है? बूढ़े-बुजुर्ग शंका जाहिर करते हैं- भाई, हारमोनियम मास्टर नहीं रहेगा तो सुर-ताल कौन मिलाएगा? सुमिरन, पंवारा कौन गाएगा? अब ब्रह्मबाबा ही बेड़ा पार लगाएं।

दोपहर हो चुकी है। बहनजी बार-बार घड़ी देखती हैं और जाकर बुधन बाबू से पूछती हैं। विद्यालय सज-धज कर तैयार है। बच्चे हाथ में फूलों की माला लिए राह निहार रहे हैं। इसी बीच बिंदा भागती आती है और दीदी से पूछती है- दाल, सब्जी तैयार है। दही भी आ गया है। कहतीं तो अदहन में चावल छोड़ देती? अभी रुको बिंदा, साहब को आ जाने दो। वैसे चावल बनने में समय ही कितना लगता है? फिर अपने वर्ग की तरफ बढ़ काम में मशगूल हो जाती हैं। इसी बीच दो मोटर साइकिल पर चार लोग आते हैं। धूल भरे चेहरे पहचान में नहीं आ रहे हैं। बुधन बाबू दौड़ कर पहचानने की कोशिश करते हैं। अरे, ये तो रामायण बाबू हैं! साथ में साहब भी हैं। दो बच्चे पानी लेकर दौड़ते हैं। सभी हाथ-मुंह धोते हैं और आगे बढ़ते हैं। बुधन बाबू विद्यालय परिसर में साहब का स्वागत करते हैं। बच्चे माला पहनाते हैं और भाग कर अपनी-अपनी कक्षाओं में चले जाते हैं। साहब रामायण बाबू के साथ सीधे वर्ग पांच में जाते हैं। यहाँ बत्तीस बच्चे नामांकित हैं और सभी उपस्थित हैं। साहब को देखते ही साथ खड़े होते हैं और समवेत स्वर में 'प्रणाम' बोलते हैं। साहब आशीर्वाद देते हैं और बैठ जाने का संकेत करते हैं। फिर कुछ सवाल करते हैं-इस घण्टी में क्या पढ़ाया जाता है? समवेत स्वर- विज्ञान सर। कल क्या पढ़े थे? उत्तर- सजीव और निर्जीव। प्रश्न- सजीवों में ऐसे कौन-से लक्षण पाए जाते हैं जो निर्जीवों में नहीं मिलते? आधे से अधिक बच्चों ने माकूल जवाब दिए। पीछे बैठे एक छात्र से साहब ने पूछा- क्यों जी, तुम्हें इस प्रश्न का उत्तर मालूम नहीं है क्या? यह बाबूराम था। धीरे से खड़ा हुआ और बोला- मालूम है सर। साहब- फिर उत्तर क्यों न दिए? हमारे मास्टर साहब ने समझाया है कि अगर कोई लड़का पहले खड़ा होकर जवाब देने लगे तो बाकी बच्चों को सावधानी से सुनना चाहिए और अपनी बारी का इंतजार करना चाहिए। तो आप पहले क्यों न खड़े हुए? छात्र को कहते कुछ न बना सो मास्टर साहब को देखने लगा। बुधन बाबू बोले- श्रीमान, इस बच्चे के पैर पोलियो ग्रसित हैं। सो झटके से खड़ा नहीं हो पाता। फिर इशारा कर बोले- बाबूराम, साहब के सवाल का जवाब दो। बाबूराम ने कहना शुरू किया- सर, सजीवों में वृद्धि होती है। ये श्वसन क्रिया करते हैं। ये अपने जैसे दूसरे सजीव को जन्म देते हैं। धूप, गर्मी बरसात का इन पर प्रभाव पड़ता है। फिर उसने अगल-बगल उगे पेड़-पौधों की तरफ उंगली से इशारा कर ढेर सारे उदाहरण भी दिए। साहब के चेहरे पर संतुष्टि के भाव उभरने लगे। तभी उन्होंने गौर किया, बाबूराम तिलमिलाने लगा। बुधन बाबू दौड़ कर गए और बच्चे को पकड़ नीचे बैठाते हुए बोले- श्रीमान, अभी इसके पैरों में उतनी ताकत नहीं है। ढेर देर खड़े रहने पर गिर जाता है। कई बार तो चोट भी लग चुकी है। साहब से रहा नहीं गया। दौड़े और बाबूराम का माथा चुम लिया। बोले- शाबाश बेटे, बहुत बढ़िया जवाब दिया तूने। फिर पह्कट से अपना फाउंटेन पेन निकाल बाबूराम को देते हुए पूछे- बेटा, आप लोगों को विज्ञान कौन पढ़ाते हैं? बच्चों ने एक साथ जोर से उत्तर दिया- ब..ह..न..जी..! साहब पीछे मुड़े और जानना चाहा, ये बहनजी कौन हैं..? बुधन बाबू ने आगे बढ़ अनुरोध किया-सर, काफी गर्मी है। पछियारी हवा हलक सूखा रही है। कुछ गुड़-शक्कर के साथ पानी पी लिया जाय फिर अगली कक्षाओं में चला जाय। खाली जगह देख सभी बैठ गए और पानी पीने लगे। कुंए के मीठे जल ने सचमुच तरोताजा कर दिया। चौथा ग्लास खाली करते हुए साहब ने फिर दुहराया- ये बहनजी कौन हैं? बताता हूँ सर, ये मेरे विद्यालय की सहायक शिक्षिका हैं। बहाल होकर आईं तो यहीं की होकर रह गईं। बगल विद्यालय गांव वालों ने टाट-फुस का एक घर खड़ा कर दिया। थोड़ी जमीन घेर एक छोटा-सा आंगन बना दिया है। ये उसी में रहती हैं। साहब की उत्सुकता बढ़ी। फिर पूछे- और घर-परिवार? कोई नहीं है सर। पति की जब अकाल मृत्यु हुई तब दो साल की बेटी गोद

में थी। सदमे और सिसकती सांस लिए सीधे यहीं आ गईं। गांव ने इनकी तमाम जरूरतों का ध्यान रखा। अब ये उनका ध्यान रखती हैं। कहती हैं– अब कहीं नहीं जाऊंगी। बीते वर्ष बेटी भी ब्याह दीं। फिर बेनीपुर के बच्चों के साथ आराम से जीना शुरू कर दिया। कभी घर नहीं जातीं? नहीं सर, बहुत पहले एक बार गईं थीं। बता रही थीं कि भाई-भैवदी ताने मारने लगे। कहने लगे कि हिस्सा-बखरा के लिए आई है। तब से पलट कर नहीं गईं। इससे ज्यादा नहीं जानता श्रीमान। वैसे इतना जरूर कहूँगा कि इस उजाड़ बियाबान रेगिस्तान में बेनीपुर के बच्चों के चेहरे पर जो मुस्कान देख रहे हैं, वह बहनजी की पूजा का ही प्रसाद है। ये बाबूराम जिससे आप अभी मिले हैं उसे खड़ा करने में इनका बड़ा योगदान है। सुबह-शाम कवायद कराती हैं। अपने हाथ से तेल मालिश करती हैं। इसका बाप नहीं है। मां मजदूरी करती है। सो अपने साथ रखती हैं। दो सांझ की रोटी और दो कपड़े की कभी कमी नहीं होती। कहाँ हैं बहनजी? भारी उत्सुकता से साहब ने सवाल किया। जी, सामने पीपल पेड़ के नीचे बच्चों को पढ़ा रही हैं। अब साहब रुके नहीं। तेजी से आगे बढ़े। रामायण बाबू और मास्टर साहब को लगभग दौड़ना पड़ गया।

एक साथ तीन कक्षाओं का संचालन। बच्चे अर्धवृताकार बैठे हैं। सभी एक दूसरे को देख सकते हैं। ठीक बीच में काठ का ब्लैक बोर्ड रखा है। वर्ग दो और तीन के बच्चे गणित बना रहे हैं। जो पहले बना लेता है और उत्तरमाला से अपने उत्तर का मिलान कर लेता है वह दौड़ कर बोर्ड पर सवाल को हल करता है। बाकी बच्चे अपने उत्तर का सत्यापन इससे करते हैं। वर्ग एक के बच्चे अपने स्लेट पर पेंसिल से आड़ी-तिरछी रेखाएं खींचते हैं और जोर देकर कहते हैं, देखो, मैंने घोड़ा बना दिया। दूसरा ऐसा ही करता है और कहता है, मैंने हाथी बनाया है। दोनों अपने हिसाब से सही हैं पर दूसरे के हिसाब से गलत। बात बिगड़ जाती है। अब फैसला बहनजी को करना है। सो दोनों स्लेट उठाए खड़े हैं। बहनजी का दो टूक जवाब है– तुम दोनों सही हो। वश, रामू के घोड़े का मुंह ज्यादा लंबा हो गया है। उसे वहाँ से हटा कर सामू के हाथी में जोड़ दो। फिर देखो, हाथी-घोड़ा दोनों तैयार। बच्चे खुश हो जाते

हैं और हाथी, घोड़ा, पालकी, जय कन्हैया लाल की गाते हुए बैठ जाते हैं। रानी कबूतर बना कर लाई है और बहनजी को दिखाना चाहती है। बहनजी की नज़र स्लेट से पहले उसके फ्रहक के टूटे बटन पर पड़ती है। झोली से सुई-धागा निकाल मरम्मत कर रही हैं। साहब देर से खड़े सब कुछ देख रहे हैं। नज़रें रामायण बाबू से टकराती हैं। उनकी आंखों के कोर भींग आए हैं। साहब खुद को रोक नहीं पाते हैं। हाथ जोड़कर कहते हैं- बहनजी को मेरा प्रणाम। बच्चों में खोई बहनजी चौंकती हैं। बुधन बाबू परिचय कराते हैं- ये अपने स्कूल इंस्पेक्टर साहब और ये अपने संगठन मंत्री रामायण बाबू हैं जिनकी चर्चा आपसे अक्सर किया करता था। 'जी..जी..प्रणाम सर। मुझसे भूल हो गई। मैं देख नहीं पाई। बहनजी खेद प्रकट करती बोलीं। कोई बात नहीं। लेकिन मैंने तो देख लिया। सीमित संसाधनों से असीमित ऊर्जा के प्रवाह को देख लिया। आज बीस वर्षों से स्कूलों को ही देख रहा हूँ। पांच-सात जिलों का भ्रमण भी कर चुका है। लेकिन, जो जज़्बा, जो समर्पण यहाँ पाया, वह कहीं नहीं देखा। लोग अक्सर संसाधनों का रोना रोते हैं। यहाँ तो कुछ भी नहीं है। फिर भी इतना उत्साह? काबिले तारीफ! रामायण बाबू, एक बढ़िया मुलाहिजा तैयार कीजिए और विभाग को भेज दीजिए। साल भर के अंदर विद्यालय का भवन बन जाना चाहिए। साथ में शिक्षिका आवास भी। लेकिन सर, मेरे बच्चों का तो मुलाहिजा हुआ ही नहीं! सकुचाती हुई बहनजी बोलीं। मुझे अब कुछ भी नहीं करना है। बुधन बाबू ने मुझे सब कुछ बता दिया है। वैसे आपका नाम क्या है? साहब बड़ी विनम्रता से बोले। जी..जी. .संजना। मेरा नाम संजना है। पढ़ाई-लिखाई कहाँ से हुई? मेरा मतलब, मैट्रिकुलेशन कहाँ से कीं? जी, कृष्णानंद हाई स्कूल कैल से? कब किया? जी, साल अस्सी था। साहब चौंके। क्या..कैल से किया? अस्सी में किया..? जेहन पर हथोड़े दनादन पड़ने लगे। और, अतीत के अक्स आंखों में उतरने लगे..!

भुवन, मेहनत पर ध्यान दो। तिवारी सर कह रहे थे कि उच्च गणित में तेरे अंक बहुत कम आए हैं। अगर यही हाल रहा तो शंकर और महम्मद जान बाजी मार ले जाएंगे। बेटा, शिखर पर पहुंच कर शिखर पर बने रहना आसान नहीं होता। इसके लिए एड़ी चोटी एक करनी पड़ती है। एक कविता क्या छप गई, खुद को कवि मान बैठे! अरे, वह तो मैंने तेरा मन रखने के लिए छपवा दिया था। मैं क्या जानता था कि विज्ञान का विद्यार्थी विषय छोड़ दिन-रात कविताई करता फिरेगा! चित भी मेरी और पट भी मेरी, सब दिन नहीं चलते बेटा! अब तुम जा सकते हो। याद रहे, बोर्ड में अभी छः महीने बाकी हैं। ज्यादा कुछ नहीं बिगड़ा है। पांडेय सर एक सांस में सब कुछ बोल गए। और, सच में पांडेय सर की कही बातें सच साबित हुईं। प्री-टेस्ट में शंकर चार अंक से आगे निकल गया। भुवन को वर्ग में दूसरा स्थान मिला। इस हल्के से झटके ने बड़ा काम किया। सारी कविताई काफूर हो गई। आंखों की नींद हराम हो गई। जमीन तैयार थी। मेहनत के खाद-पानी पड़े तो फसल लहलहा उठी। तीन महीने बाद बोर्ड की परीक्षा हुई। फिर रिजल्ट भी आए। तब प्रथम श्रेणी पास करने वाले छात्र उंगलियों पर गिने जाते थे। संयोग वश इस बार चार छात्रों को यह सौभाग्य मिला। भुवन का पोजिशन वापस मिल गया। लेकिन, सबसे बड़ी बात ये हुई कि बाजी एक लड़की मार ले गई। विद्यालय में सर्वश्रेष्ठ स्थान पाने वाली वह एक दुबली-पतली लड़की थी। यह अप्रत्याशित था। फिर क्या, चार कोस में डंका पिट गया। भुवन नज़र न मिला सके। जिस दिन रिजल्ट कार्ड मिल रहा था, वह फिर मिल गई। भुवन को देखी तो मुस्कराई। लेकिन बंदा उसका सामना न कर सका। भुवन पर भारी पड़ गई थी वह। यह कोई और नहीं, बल्कि संजना ही थी। और.। यही उससे आखरी मुलाकात भी थी। भुवन पढ़ने के लिए मामू के पास पंजाब चला गया। संजना कहाँ गई, उसे नहीं मालूम। आज जब धुंध के बादल छंटे तो सब कुछ साफ-साफ दिखाई देने लगा। संजना अतीत से निकल वर्तमान में सामने खड़ी थी। आंखें बरसने लगीं। हजरत खुद को खड़ा न रख सके। बच्चों-सा बिलखते हुए बोले- मुझे पहचाना संजना? मैं नेमीपुर वाला भुवन हूँ। वही भुवन जिसका पोजिशन तूने तोड़ा था। अस्सी में.। कृष्णानन्द हाई स्कूल में। याद करो संजना..! मष्तिष्क पर जोर पड़े संजना के। एक बारगी सब कुछ याद आता चला गया। लगभग चीखते हुए बोली- भुवन भाई..! फिर क्या था? भावनाओं का ऐसा ज्वार आया जो तमाम वर्जनाओं को तोड़ता चला गया। शिक्षक- निरीक्षक के बीच खड़ी दीवार भहराकर गिर पड़ी। संजना हाथ पकड़ ली। खूब रोई। भुवन भी खूब रोए। रोते-रोते भुवन ने यह भी बता दिया कि उसकी हिंदी की नोटबुक जो चोरी हुई थी, उसे किसी और ने नहीं बल्कि खुद उन्होंने ही

चुराई थी। लगा, साल अस्सी आंखों में उतर आया। दोनों फिर से वर्ग दस के विद्यार्थी बन गए और देर तक बिंदास हंसते रहे। मंजर मामूली न था। यह एक काल खंड का मिलन था। बच्चे तो कुछ समझ न पाए। लेकिन रामायण बाबू और मास्टर साहब अपने आंसू छुपा न सके।

कहना न होगा, साहब ने सिर्फ विद्यालय ही नहीं देखा बल्कि घूम-घूम कर पूरी बस्ती देख लिया। संजना बस्ती के बड़े-बुजुर्गों का ऐसे परिचय कराती जैसे सभी उसके परिवार के सदस्य हों। सर, इनसे मिलिए। ये बेनीपुर के नारायण काका हैं। इनके दो लड़के लुधियाना रहते हैं। वह जो स्कूल में पीतल की घण्टी बजती है न, इन्हीं का दिया हुआ है। ये भगरासन बाबा हैं। इनका बेटा भरदुल बड़ी बढ़िया कारीगर है। कपड़े सुंदर सीता है। आज रात में नाटक होगा सो हारमोनियम मास्टर की खोज में गया है। संजना तेज कदमों भागी जाती थी। साहब के साथ सभी थकने लगे थे। सो रामायण बाबू बोले- बहनजी, साहब ने बहुत कुछ देख लिया। तमाम वर्ग के बच्चों से मिल भी लिए। 'नहीं सर, अभी तो आपने अपना सरकारी विद्यालय ही देखा है। चलिए, मेरा विद्यालय देख लीजिए। संजना जोर देकर बोलीं। सभी आगे बढ़े। देखिए सर, मैं इसी में रहती हूँ। अंदर आइए। सभी अंदर गए। आंगन में बेनीपुर की दर्जनों ब्याही बेटियां और बहुएं बैठी थीं। कुछ पढ़ रही थीं। कुछ कसीदाकारी सीख रही थीं। कुछ भोजन बना रही थीं। संजना तनिक जोर देकर बोलीं- बिंदा, यही मेरे हाकिम हैं। अब जल्दी चावल बना लो।

तिजहरिया ढलने लगी तो सभी भोजन करने बैठे। हालांकि खाना कुछ खास नहीं था लेकिन उसमें गजब का मिठास था। चावल, दाल और आलू-परवल की सब्जी। साथ में बकेन गाय का अमृत-सा दही। हल्की आंच पर तैयार धनिया की चटनी। सबने छक कर भोजन किया। थोड़ी देर आराम कर साहब चलने को हुए तो संजना ने अनुरोध किया- हुजूर, आप हाकिम हैं। आपके समय कीमती हैं। एक मामूली शिक्षिका की क्या औकात कि आपको रोके! लेकिन, बतौर संजना मैं भुवन से कहूंगी कि आज की रात इस गरीब बस्ती में गुजारी जाय। मेरे नौनिहालों का नाटक देखा जाय और उनका मनोबल बढ़ाया जाए। थोड़ी देर में यहाँ बस्ती का बिटोर होगा। आप लोगों में दो शब्द बोल देंगे तो बस्ती में बसंती बयार बह जाएगी। जरा सोचिए, मुझे कितनी खुशी होगी! मैं तो निहाल हो जाऊंगी। इसरार इतना प्यारा था कि भुवन इंकार न कर सके। साहब से अनुमति लेकर बच्चों को छुट्टी दे दी गई। प्रतिभागी बच्चे नाटक की तैयारी में लग गए।

सांझ हुई। पंछी पीपल पेड़ पर बने घोंसलों में लौट आए और धीरे-धीरे शांत हो गए। नीचे शोरगुल बढ़ने लगा। मजे की बात रही कि हरिपुर का हीरामन हारमोनियम मास्टर मिल गया। बंदा बिहुला-विषहरी और सोरठी-बृजाभार का नामी गवैया था। आलाप उठाता तो शरीर में सिहरन समा जाती। नाम सुनकर ही भीड़ बढ़ने लगी। मनोहर, महंगू और स्वामीनाथ भी गैसबत्ती लेकर आ गए। समय से नाटक शुरू हुआ। देखिए, हिरामन ने लहरा बजाना शुरू किया। मातबर मियां ढोलकिया ने सुर पकड़ ताल ठोक दिया। झगरू साव झाल बजाने लगे। सुर-ताल का संगम होने लगा। हिरामन ने देखा कि ढोलकिया मजा हुआ खेलाड़ी है सो लहरा खतम कर संगीत की गहराई में उतरने लगा। हारमोनियम की पटरी पर उंगलियां अठखेलियां करने लगीं। ये देखिए, दादरा की उठान में तिरकिट। ये रहा रूपक ताल में चक्करधार तिहाई। फिर दुगुन, चौगुन और लगी। बाप रे, कहरवा में तो कहरे बरपा दिया। जिओ रे ढोलकिया! आज बेनीपुर की लाज रख लिया। आधे घण्टे की युगलबंदी के बाद हिरामन ने सरस्वती का सुमिरन किया और पंवारा उठा लिया।

पुरुब+ में सुमरीं ए रामा
उगल+ सुरुजवा हो जिनका चढ़े
दुधवा के धार नूं ए की।

पछिम+ में सुमरीं ए रामा
पीर सुबहानवा के जिनका चढ़े
मुरुगा मलीदा नूं ए की।

जब दशों दिशाओं की वंदना पूरी हो गई तो नाटक शुरू हुआ। ये देखिए, श्रवण कुमार माता-पिता की सेवा कर रहे हैं। आगे देखिए, कांवर में ढो रहे हैं। जंगल आ गया। माता-पिता प्यासे हैं। पानी लाने नदी जा रहे हैं। राजा दशरथ प्रकट होते हैं। श्रवण कुमार को मृग समझ शब्द भेदी बाण छोड़ देते हैं। बाण सीधे श्रवण कुमार के सीने में लगता है। कुमार बिलखते हुए अपनी बात कह प्राण छोड़ देते हैं। राजा घोर पश्चाताप में पड़ जाते हैं। पानी लेकर माता-पिता के पास जाते हैं। अंधे मां-बाप ताड़ जाते हैं कि आगंतुक उनका बेटा नहीं है। सो पानी पीने से इंकार करते हैं और हाय बेटा कहते हुए प्राण निछावर कर देते हैं। मरते-मरते राजा को अभिशाप देते हैं। पर्दा गिरता है। लोग देर

तक रोते रहते हैं। संजना मंच पर आती हैं और अपने बाल कलाकारों का परिचय कराती हैं। फिर साहब सहित, रामायण और बुधन बाबू को मंच पर बुलाती हैं। साहब बच्चों को पुरस्कृत कर जनता-जनार्दन को संबोधित करते हैं। संजना जी की भूरी-भूरी प्रशंसा करते हैं।

आज छुट्टी का दिन है सो विद्यालय बंद है। लेकिन बच्चे आए हुए हैं। साहब निकल रहे हैं। बस्ती की बहू-बेटियां विदा कर रही हैं। संजना की आंखें भर आईं हैं। साहब खामोश निगाहों बेनीपुर को निहार रहे हैं। फिर विद्यालय पर दृष्टि डालते हैं। जिन छोटे-छोटे कार्यों के चलते बच्चे बाहर रह जाते हैं वैसा यहाँ नहीं है। बच्चे और बकरियाँ यहाँ साथ आते हैं। वाह, क्या अनूठा प्रयोग है! फिर हेड सर की पीठ थपथपाते कहते हैं- बुधन बाबू, आपका रिपोर्ट चौबीस कैरेट सोने की तरह शुद्ध है। सचमुच यह कहना मुश्किल है कि यहाँ गांव में स्कूल है कि स्कूल में गांव है।अब मोटरसाइकिल पर सवार होते हैं। धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं। फिर अचानक रुक जाते हैं। संजना को बुलाते हैं और लगभग चीखते हुए कहते हैं.। तुस्सी ग्रेट हो संजना..! गाड़ी रफ्तार पकड़ लेती है। उड़ती हुई धूल धुंध बनते जाती है। अब कुछ दिखाई नहीं देता लेकिन बहनजी के कान अब भी बज रहे हैं। बार-बार भुवन के कहे शब्द गूंज रहे हैं- तुस्सी ग्रेट हो संजना..!

पूजा भारद्वाज

बेड़ियां नारी की

बेड़ियां क्या होती हैं
शायद एक तरह का बंधन हैं
किसी ने लिखा मेरा सोलह श्रृंगार मेरी बेड़ी हैं
नहीं, मेरे सोलह श्रृंगार नहीं है बेड़ियां,
मेरे नारी होने का अस्तिव है
मेरी पहचान हैं ये सोलह श्रृंगार
मेरे कदमों में पायल, मेरे होने का वजूद है
मेरी बिंदिया मेरे माथे का नूर है
मेरे हाथों की मेंहदी, माथे का सिंदूर
पैर के बिछिए, मेरा अपने पति के प्रति प्रेम है
ये सब श्रृंगार मेरा उनके लिए समर्पण है
बेड़ियां नहीं बंधन नहीं
क्यों रहूं मैं बेड़ियों में, जब मैंने ही मानव को जन्म दिया
मेरे घर की चार दिवारी मेरी बेड़ियां नहीं
मेरा आशियाना है
जहां सब को सुकून मिलता है
जहां मैं किसी की बेटी, बहन मां, बहु,
और भी कई रिश्तों और नामों से पुकारी जाती हूं....
एक आवाज पर मैं थिरकती हुई
अपने होने का अहसास कराती हूं
मुझे शर्म नहीं कि मैं नारी हूं
ना किसी का डर, मैंने ही तो तुम को
सृजित किया है, तो तुम से कैसा डर
माना की कई बार तुम अपनी मर्यादा भूल जाते हो
फिर मैं ही तो चंडी बन कर
तुम को फिर मर्यादा में लाती हूं
फिर क्यों सोचूं मैं बंधन में हूं
कि मेरे पैरों में बेड़ियां है
तुम लोग ही अपनी कमी को
छुपा कर मेरे पहलू में आ कर छुपते हो
मेरे अंदर ही इतनी सहनशीलता है
मैं ही अपना दर्द छुपा कर तुम को
इस धरा को देखने का सौभाग्य देती हूं
तुमको चलना सिखाती हूं
इस जीवन को जीना सिखाती हूं
मुझे अपने पर गर्व है कि मैं नारी हूं
मैं किसी अलग पहचान की मोहताज नहीं
मैं खुद एक पहचान हूं।

नमिता 'सिंह' आराधना

फ़र्ज

आज होली का त्यौहार था। नैना घर में बिल्कुल अकेली थी ना बेटा-बहू आए थे ना ही बेटे ने माँ को त्यौहार पर बुलाया था, क्योंकि उसकी पत्नी सीमा नहीं चाहती थी। भारी मन से खिड़की के पास चली गई और बच्चों को होली खेलते देखने लगी। देखते-देखते वह ख्यालों में डूब गई। जब मनु छोटा था। माँ से बहुत लगाव था मनु का। खेलते खेलते भी कई बार आकर माँ से लिपट जाता। नैना की जिंदगी बहुत खुशहाल नहीं थी। पति के दुर्व्यवहार ने उसे अंदर तक तोड़ दिया था। लेकिन बेटे की तरफ़ जिम्मेदारी को देखते हुए उसके पास इस जीवन से समझौता करने के सिवाय और कोई चारा भी नहीं था। जीवन के झंझावातों से जब वह तंग आ जाती और आँखों में आँसू आ जाते तो मनु उससे लिपट कर कहता, 'माँ जब मैं बड़ा हो जाऊँगा ना, तब आप मेरे साथ रहना। मैं आपका बहुत ख्याल रखूँगा।' उसकी बातों से नैना को बहुत सहारा मिलता और जीने की हिम्मत भी मिलती। मनु ने प्रेम विवाह किया। उसका मानना था कि उसकी पत्नी भी नैना का उतना ही ख्याल रखेगी, उतना ही प्यार देगी जितना वह करता है। उनके बीमार पड़ने पर नैना उनकी देखभाल के लिए उनके पास गई। ख्याल तो यही था कि अब वह उनके साथ ही रहेगी। बेटा भी यही चाहता था। लेकिन बहू बीमारी से उभरते ही नैना को वापस भेजने के लिए उसके साथ बुरा बर्ताव करने लगी। मनु भी अपनी पत्नी से कुछ नहीं कहता था। सब देख-सुनकर भी चुप रहता। उल्टा कई बार अपनी पत्नी का ही पक्ष लेता और नैना को ही दोषी ठहराता। कितने प्यार से बीमारी में वह उन दोनों की सेवा करने गई थी, उसका ये सिला? उनके व्यवहार से क्षुब्ध होकर नैना अपने घर वापस लौट आई। बेटा एक-दो दिन के अंतराल पर उससे बातें कर लिया करता था। अचानक फोन की घंटी बजने से नैना का ध्यान टूटा। फोन बेटे का ही था। हैप्पी होली कह रहा था। 'माँ क्या कर रही हो आज?' नैना क्या कहती। अकेली क्या करेगी। मनु पूछ रहा था, 'कुछ बनाया नहीं है तो बाहर से मँगा दूँ?' नैना बस इतना ही कह पाई, 'मन नहीं है कुछ खाने को। खा लूँगी कुछ भी। वैसे भी इस उम्र में बाहर का खाना हजम ही कहाँ होता है।' और फोन रख दिया। सोचने लगी क्या फोन पर इतना हाल-चाल पूछ लेना ही काफी है? माना पत्नी जीवन साथी है तो माँ ने भी बड़े कष्टों से पाल-पोस कर, पढ़ा लिखा कर उसे इस लायक बनाया कि वह अपने पैरों पर खड़ा हो सके और कोई लड़की उसके जीवन में आ सके।

बढ़ती उम्र में माँ- बाप को सुख सुविधा और पैसों से ज्यादा बच्चों के साथ और उनके प्यार की जरूरत होती है। तभी दरवाजे पर दस्तक हुई। नैना ने दरवाजा खोला तो पड़ोस के अभिषेक और उसकी पत्नी दरवाजे पर खड़े थे। नैना ने उन्हें प्यार से अंदर बुलाया तो उन्होंने कहा, 'आंटी, आज त्यौहार के दिन तो हम किसी भी कीमत पर आपको अकेले घर में नहीं रहने देंगे। आप हमारे साथ हमारे घर चलिए और हमारे साथ ही खाना खाइए।' नैना भाव विभोर हो गई। वैसे भी वे दोनों नैना की छोटी-बड़ी हर जरूरत का ध्यान रखते थे। अभिषेक, मनु की उम्र का ही था। अभिषेक का हाथ थामे वह उसके घर की ओर चल दी और आँखों के कोरों पर आए आँसुओं को पीने की कोशिश करने लगी।

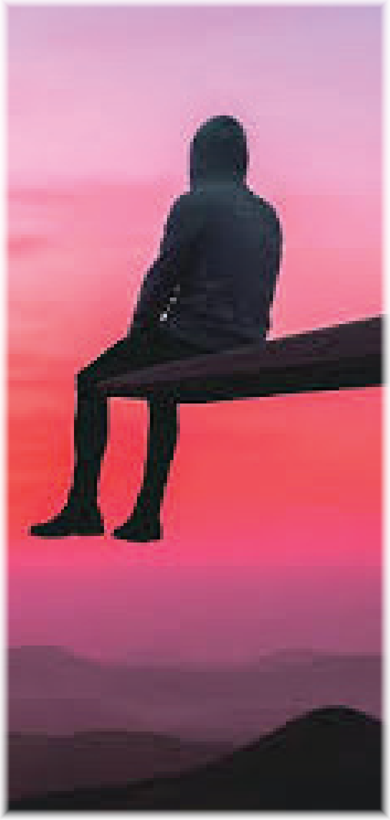

पीपल का पेड़

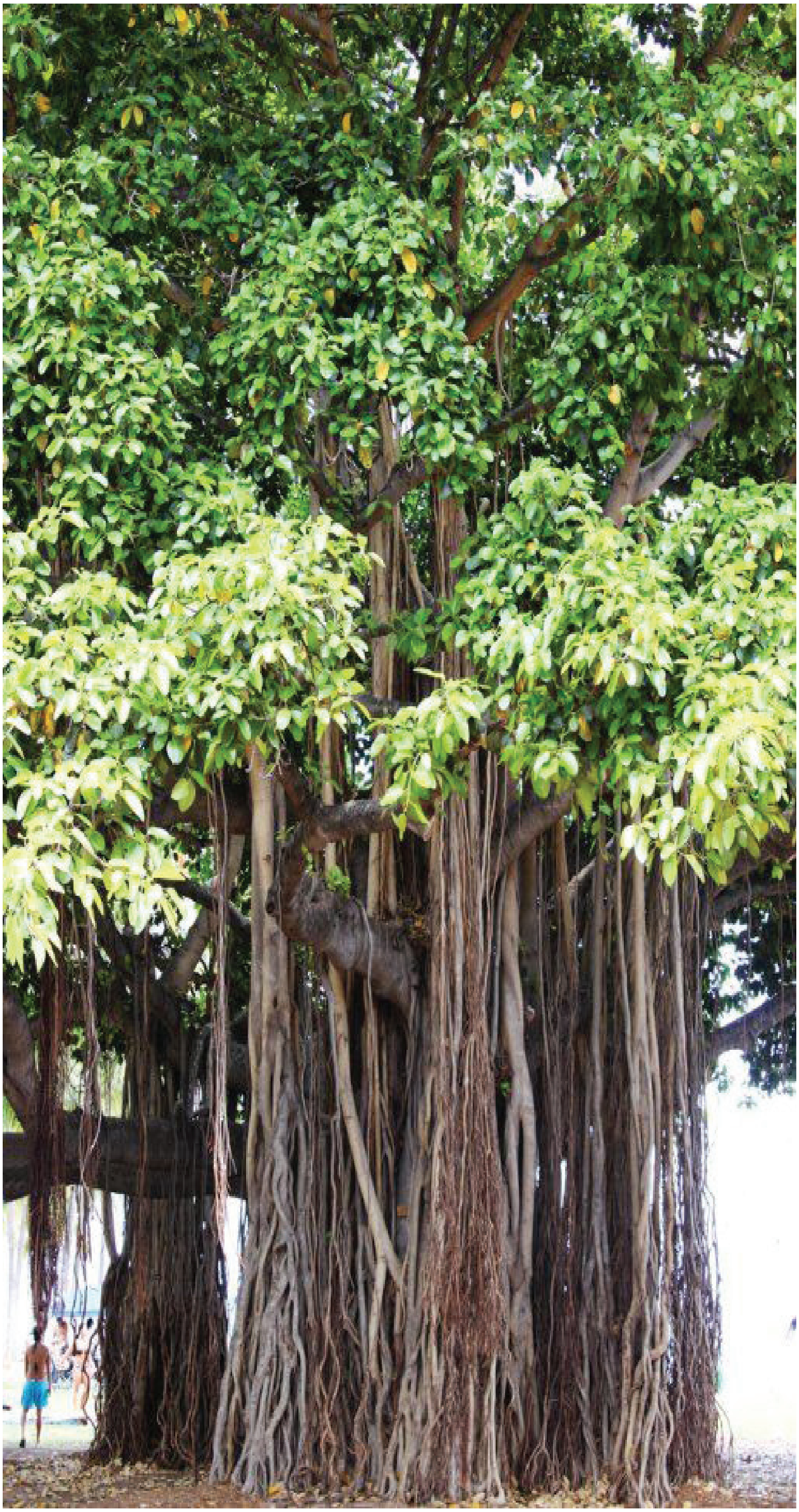

बुखार के लिए है बहुत असरदार-

अगर आपको या आपके किसी जानने वाले को बहुत तेज बुखार है तो आप पीपल के कुछ ताजे पत्ते ले आइए और उसे दूध में डालकर उबाल लीजिए। आप दूध में चीनी भी मिला सकते हैं। फिर इस दूध को दिन में दो बार पीजिए या बीमार व्यक्ति को पिलाइए। ऐसा करने से बुखार में आराम मिलेगा।

दांतों के रोग में पीपल से लाभ-

पीपल और वट वृक्ष की छाल को समान मात्रा में मिलाकर जल में पका लें। इसका कुल्ला करने से दांतों के रोग ठीक होते हैं। पीपल की ताजी टहनी से रोज दातुन (ब्रश) करने से दांत मजबूत होते हैं। इससे बैक्टीरिया खत्म होते हैं और मसूड़ों की सूजन भी कम होती है। इसके अलावा पीपल की दातुन करने से मुंह से आने वाली दुर्गंध भी खत्म हो जाती है।

सांस की तकलीफ-

सांस संबंधी किसी भी प्रकार की समस्या में पीपल का पेड़ आपके लिए बहुत फायदेमंद हो सकता है। इसके लिए पीपल के पेड़ की छाल का अंदरूनी हिस्स निकालकर सुखा लें सूखे हुए छाल का चूर्ण बनाकर खाने से सांस संबंधी सभी समस्याएं दूर हो जाती है। इसके अलावा इसके पत्तों का दूध में उबालकर पीने से भी दमा में लाभ होता है।

दस्त-

यदि दस्त के साथ खून आता है तो धनिया बीज, गुड़ व पीपल की नरम पत्तियों को बारीक पीस लें। इसे दिन में दो बार प्रयोग करें। इससे एक सप्ताह में आराम मिल सकता है।

अफीम की खेती

चित्तरंजन गोप

चाय की दुकान के बाहर कुछ कुर्सियां और कुछ बेंच पड़े थे। एक कुर्सी पर बैठकर विक्की चाय पी रहा था और बगल के बेंच पर बैठे प्रशांत काका और हलीम चाचा की बातचीत सुन रहा था। बातचीत का विषय था- तालिबान। अफगानिस्तान में तालिबान के कब्जे का दोनों विरोध कर रहे थे। विरोध का अंदाज ऐसा जोशीला था, मानो द्रौपदी के वस्त्र हरण के समय एक साथ दो-दो विकर्ण प्रतिवाद भाषण दे रहे हो।

बातचीत का मजा लेते-लेते विक्की भी उसमें शामिल हो गया। उसने प्रशांत काका से पूछा--काका, धर्म के प्रति आपकी आस्था है कि नहीं?

'हेरू हेरू हेरू!' काका ने हंसते हुए कहा, 'है क्यों नहीं? अटूट आस्था है, अटूट!'

'अच्छा...!' विक्की ने कहा, 'तब तो आप अपने धर्म ग्रंथों में लिखी बातों को भी पूरा-पूरा सच ही मानते होंगे?'

'एकदम मानता हूं। सौ बार मानता हूं। हमारे धर्म ग्रंथों में...।'

'ठीक है, ठीक है।' विक्की ने बात को बीच में काटते हुए कहा, 'तब तो आप ऐसा भी सोचते होंगे कि पूरी दुनिया आपके धर्म ग्रंथों के अनुसार चलती तो बड़ा अच्छा होता?'

'हां, बिल्कुल। अच्छा तो होता।' कहते हुए काका ने हलीम चाचा की तरफ देखा और पुनः कहा, 'परंतु मैं सभी धर्मों और धर्म ग्रंथों का सम्मान करता हूं।'

चाचा ने सम्मति में माथा हिलाया और बोले- मेरा भी ऐसा ही विचार है।

'पर आपलोग अपने-अपने धर्म को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं न?'

'क्यों नहीं मानूं भला?' काका बोले।

'एकदम मानता हूं।' चाचा ने कहा।

'तब तो दूसरे धर्मवालों को आपलोग पापी और नीच ही समझते होंगे?'

इस प्रश्न का जवाब देने में काका और चाचा हकलाने लगे।

'और आपलोगों के लिए मंदिर-मस्जिद ही सबसे बड़ी चीज है। उससे बड़ी चीज और कुछ नहीं। क्या?' विक्की ने अगला प्रश्न किया तो काका और चाचा, फिर हकलाने लगे।

'अब अंतिम प्रश्न-- धर्म बड़ा कि इंसान?'

'देखो, यह प्रश्न ही गलत है। ऐसी तुलना करना...। विचार करने पर धर्म ही बड़ा साबित होगा।' काका बोले।

'मज़हब के सामने इंसान की क्या बिसात?' चाचा ने कहा।

'यानी आप दोनों अफीम के नशेड़ी हो और मौका मिलते ही तालिबान की तरह अफीम की खेती करने लगोगे।'

'हेरू हेरू हेरू! क्या बक रहे हो?'

'बक नहीं रहा हूं, सच बता रहा हूं। आपलोग तालिबान का विरोध न करके, उसका जयकारा लगाइए।' बोलते-बोलते विक्की खड़ा हो गया और सामने जाकर आहिस्ते से बोला, 'जाइए, जाइए, अफीम की खेती कीजिए!'

पासा उलटा पड़ता देख, काका और चाचा अपना-सा मुंह लेकर बगले झांकने लगे।

सुधा आदेश (लखनऊ) उपन्यास श्रृंखला..

'अब हमें स्नेहा के विवाह के संबंध में सोचना चाहिए।' एक दिन मैंने अवसर पाकर शशांक से कहा।

'विवाह भी हो जाएगा, पहले उसे सेटिल तो हो जाने दीजिए।' शशांक ने कहा था।

स्नेहा निरंतर सफलता की सीढ़ी दर सीढ़ी चढ़ती जा चली जा रही थी पर कहते हैं कि कुछ ईर्ष्यालु लोग अच्छाई में भी बुराई ढूंढ ही लेते हैं। हमारे कुछ ऐसे ही शुभचिंतक दबी बुझी जुबान से यह कहने से नहीं चूकते..। ठीक है उसे बहुत अच्छा जॉब मिल गया है पर इतनी पढ़ी-लिखी एवं सांवली लड़की के लिए वर ढूंढना आसान नहीं होगा। उनकी बातें सुनकर मैं कुढ़ कर रह

जाती। तब ऐसा लगता कि कुछ लोगों को किसी भी तरह से चौन नहीं मिलता है। शायद मन की कुंठा ही ऐसे लोगों से यह सब कहलवा देती है।

कंपनी ज्वाइन करने के कुछ दिन पश्चात मैंने स्नेहा से विवाह के संदर्भ में बात की तो उसने कहा, 'मम्मा अभी से मेरे पैरों में जंजीर मत डालो। अभी मुझे थोड़ा सेटल हो जाने दो। वैसे भी जब तक मुझे समझने वाला, मेरी कद्र करने वाला लड़का मुझे नहीं मिलेगा, मैं विवाह नहीं करूँगी।'

शशांक ने भी स्नेहा की बात का समर्थन कर दिया था पर मेरे माथे पर बल पड़ गए थे। आखिर यह कैसी सोच है, विवाह तो समय से ही हो जाना चाहिए। मिस्टर राइट 'की खोज में कब तक कुंवारी बैठी रहेगी? पर आजकल के बच्चे किसी की सुनते ही कहाँ है! आखिर इसी तरह २ वर्ष और बीत गए। एक बार हफ्ते भर की छुट्टी लेकर स्नेहा घर आई। मैंने सोचा कि इस बार उसे विवाह के लिए मना ही लूँगी। एक दिन अवसर देखकर मैंने स्नेहा से विवाह की बात की।'

'मुझे विवाह करना ही नहीं है।' प्रत्युत्तर में उसने कहा।

'पर क्यों बेटा?'

'मम्मा विवाह ही तो जिंदगी का मकसद नहीं होता। यही तो आप कहती हो। मैं आपके ही नक्शे कदम पर चलना चाहती हूँ।'

'मेरी बात और थी बेटा।'

'क्या आप लड़की नहीं थीं? क्या आपकी विवाह करने की इच्छा नहीं थी?' मेरी बात काटते हुए स्नेहा ने कहा।

'बेटा मेरा मकसद विवाह करना नहीं, अध्यापिका बनकर समाज सेवा करना था।'

'झूठ ममा झूठ...आप मुझसे झूठ बोल रही हैं। सच को इंसान चाहे कितना भी छिपाने का प्रयत्न करे, एक न एक दिन सामने आ ही जाता है। 'स्नेहा ने मेरी बात काटते हुए कहा तथा मेरे सामने एक एल्बम रख दी।

'यह तुझे कहाँ से मिली?' एल्बम देख कर चौक कर मैंने उससे पूछा।

'मम्मा, आज तक आपने सच क्यों छुपाया? आपकी पापा से सगाई हुई थी फिर विवाह श्वेता ममा से क्यों हुआ?' मेरी बात का कोई उत्तर न देते हुए उसने मुझसे प्रश्न किया।

जो बात मैं इतने दिन तक छुपाए रही वह अचानक ऐसे सामने आ जाएगी, मुझे एहसास ही नहीं था। यह एल्बम शायद उसे माँ-पापा की अलमारी से मिली थी। अब छुपाने से कोई फायदा नहीं था।

सच से परिचित होने पर उसने कहा, 'मम्मा, आप कहती हैं कि क्षमादान से बड़ा कोई दान नहीं है। अगर इंसान को अपनी गलती का एहसास हो जाए तो उसे क्षमा कर देना चाहिए।'

'हाँ पर...।'

'मम्मा, अब मैं समझी कि पापा ने दूसरा विवाह क्यों नहीं किया। वह आज भी आपको चाहते हैं शायद आप के प्रति अपने व्यवहार के कारण वह स्वयं को क्षमा न कर पाए हों पर आप तो उन्हें क्षमा कर सकती हैं। शायद उनका प्रायश्चित पूरा हो जाए।'

'पर बेटा, मैंने तो उन्हें कब का क्षमा कर दिया।'

'नहीं ममा, आपने उन्हें क्षमा नहीं किया..। अगर आपने उन्हें क्षमा कर दिया होता तो।'आगे के शब्द जैसे उसके तालु से ही चिपक गए थे।

'तो क्या बेटा?'

'अगर आप डैड से विवाह कर मेरी माँ बनने को तैयार हो तो मैं भी विवाह कर लूँगी।'अचानक उसने कहा और आशा भरी नज़रों से मुझे देखने लगी।

'क्या मैं तेरी मम्मा नहीं हूँ? क्या मैं अपने किसी दायित्व को निभाने में असमर्थ रही हूँ? 'उसके आग्रह पर मैंने आत्मविगलित स्वर में पूछा था।

'मम्मा, मेरे कहने का यह तात्पर्य नहीं है। आपने मेरी जैसी परवरिश की वैसी तो श्वेता मह्म भी नहीं कर पातीं पर आपको और डैड को मैं इस तरह तिल-तिल जलते नहीं देख सकती। हर पीड़ा का एक दिन अंत होता है फिर इस पीड़ा का अंत क्यों नहीं! क्या आप दोनों एक नहीं हो सकते?'

'लेकिन बेटा अब हम इन रिश्तों से परे जा चुके हैं'

'ममा, डैड तो अकेले रह ही रहे हैं पर मेरे विवाह के पश्चात आप भी अकेली रह जायेंगी। साथ ही साथ मैं भी सदा दो टुकड़ों में बैठी रहूँगी। मेरा एक टुकड़ा आपके पास रहेगा और एक डैड के पास..। आखिर कब तक मैं ऐसा जीवन जीऊँगी और क्या वह लड़का जिससे मेरा विवाह होगा, ऐसा जीवन स्वीकार कर पाएगा? क्या उसका परिवार आप दोनों के रिश्ते को समझ पाएगा?' उसने पीड़ायुक्त स्वर में कहा था।

पर बेटा जो तुम चाहती हो, अब नहीं हो सकता, लोग क्या कहेंगे?

'मम्मा विवाह की कोई उम्र नहीं होती और जहाँ तक लोगों की बात है वे तो किसी को भी नहीं छोड़ते।'

तुम सब कुछ जानने के पश्चात भी मुझ से ऐसी उम्मीद करती हो? विवशता एक बार फिर मेरे स्वर से झलक उठी थी।

'ममा, मैं जानती हूँ कि डैड से गलती हुई थी लेकिन यह भी उतना ही सच है कि आप और डैड एक दूसरे को बहुत चाहते हो जिसकी वजह से न आपने विवाह किया और न ही डैड ने फिर इस सत्य को आप स्वीकार क्यों नहीं कर पा रही हैं? मुझे अपना कर आपने अपनी बहन के प्रति अपना दायित्व निभा दिया। मुझे तो माँ मिल गईं और आपको संतान लेकिन डैड तो संतान के रहते हुए भी निःसंतान ही रहे। क्या उन्होंने मुझे आपको सौंप कर अपना प्रायश्चित पूरा नहीं कर लिया? एक

गलती की सजा उन्हें कब तक भुगतनी होगी? कभी तो इसका अंत होना ही चाहिए। मेरा बचपन तो आप दोनों की गोद एक साथ पाने में विफल रहा। क्या अब भी मुझे कभी आपसे मिलने और कभी डैड से मिलने अलग-अलग आना पड़ेगा? मम्मा अब मैं आप दोनों को एक साथ देखना चाहती हूँ। मैं भी अन्य बच्चों की तरह एक सामान्य परिवार चाहती हूँ।' कहकर स्नेहा सुबकने लगी थी।

स्नेहा की बातें सुनकर मैं भाव विह्वल हो उठी, उसे अपने गले से लगाते हुए आत्मविगलित स्वर में कहा, 'रो मत बेटी, जैसा तू चाहती है वैसा ही होगा पर क्या तुमने अपने पापा से बात की।'

'नहीं..। अगर आप अपनी सहमति देती हैं तो

मैं उनकी सहमति ले ही लूँगी।'

कभी-कभी अपनों की खुशी के लिए इंसान को झुकना ही पड़ता है, यही मेरे और शशांक के साथ हुआ। अपने सारे अहम और नफरत का परित्याग कर, स्नेहा की इच्छा अनुसार अंततः हमने कोर्ट मैरिज कर ली थी। इस विवाह से आनंदी दादी बेहद प्रसन्न थीं।उन्होंने स्नेहा को गले से लगा कर कहा, 'बेटा तूने दो सूखी डालियों को को अपने प्यार से लहलहाकर एक करने का सुखद कार्य किया है। ईश्वर तुझे सदा सुखी रखे।'

आकांक्षा दीदी भी बहुत प्रसन्न थीं। उनका मानना था कि एक ही नदी की परिस्थिति जन्य दो विपरीत दिशाओं में बहती धाराओं को एक दिन मिलना ही था। दिव्या इस सुखद क्षण का आनंद जिले में राजनीतिक पार्टियों द्वारा निज हितार्थ कराए गए उपद्रव के कारण नहीं ले पाई थी आखिर कानून व्यवस्था की जिम्मेदारी पुलिस अधीक्षक होने के कारण उसी की थी।

स्नेहा की पूर्ण परिवार की कल्पना साकार हो गई थी। वह बेहद प्रसन्न थी। इसके साथ ही उसने अपने विवाह की सहमति दे दी थी। हम भी उसके लिए रिश्ते देखने लगे..। आखिर एक दिन एक अच्छा रिश्ता आ ही गया। लड़का भी आईआईटियन था। उसने एम.एस। अमेरिका से की थी तथा वहीं काम कर रहा था। उसका जीजा अमित स्नेहा का बह्स था। अमित स्नेहा के काम और व्यवहार से अति प्रसन्न था अतः वह स्नेहा का विवाह अपने साले अभिनव से कराना चाहता था। उसने अपने मन की बात स्नेहा की..। स्काइप पर स्नेहा और अभिनव की बात कराई। उन दोनों की स्वीकृति प्राप्त कर उसने स्नेहा से उसके घर का पता लेकर रिश्ते का पैगाम भिजवाया था।

रिश्ता अच्छा था डिमांड भी नहीं थी। अमित ने विवाह के पश्चात स्नेहा का भी अमेरिका के शिकागो शहर की उसी ब्रांच में स्थानांतरण का प्रस्ताव भी रखा था जिसमें अभिनव काम कर रहा था। अमित ने स्नेहा की स्वीकृति के पश्चात ही रिश्ते का पैगाम भेजा था अतः उनके मना करने का प्रश्न ही नहीं था। बात आगे बढ़ी स्नेहा के होने वाले सास-ससुर तथा ननद ने स्नेहा से मिलने की इच्छा प्रकट की तो हमने उन्हें आमंत्रित कर लिया।

अभिनव के माता-पिता एवं बहन स्नेहा से मिलकर बेहद प्रसन्न हुए एवं इस रिश्ते पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगा दी। वे अत्यंत ही कुलीन सज्जन और संस्कारी लगे। लड़के को हम साक्षात तो नहीं देख पाए पर उसके विभिन्न पोज की फोटोस उसे हेंडसम और स्मार्ट दिखा रही थीं। मन से बहुत बड़ा बोझ हट गया था फिर भी मन की दुश्चिंता समाप्त होने का नाम ही नहीं ले रही थी। बार-बार मन में यही आ रहा था कि इतना हैंडसम लड़का उनकी सामान्य कद काठी की बेटी को उचित मान-सम्मान दे भी पाएगा! कहीं ऐसा तो नहीं वह उसे देखने के पश्चात मना कर दे। स्नेहा

के साथ भी कहीं वैसा ही ना हो जैसा कभी उसके साथ हुआ था। अनेकों प्रश्नों के साथ मन में एक कशिश यह भी थी कि बेटी हमसे इतनी दूर चली जाएगी..। उसको देखने के लिए भी आँखें तरस जायेंगी।

मन की बात शशांक से कही तो उसने कहा, तुम व्यर्थ चिंता करती हो। आखिर अभिनव के माता-पिता, जीजा- जीजी ने उसे स्नेहा के रंग-रूप कद-काठी के बारे में बता ही दिया होगा। वैसे भी हमारी स्नेहा में क्या कमी है? इंटेलिजेंट है, होनहार है, अच्छा कमा रही है..। जमाना बदल रहा है, साथ ही लोगों का नजरिया भी..। समझदार लोग आज लड़कियों के रूप रंग को नहीं वरन योग्यता को महत्व देते हैं। वास्तव में योग्यता ही व्यक्ति को सर्वगुण संपन्न बनाती है।

अभिनव को दो महीने पश्चात आना था तभी विवाह की तारीख तय की गई थी। हम विवाह की तैयारियों में जुट गए। इस बीच स्नेहा और अभिनव में स्काइप और व्हाट्सएप वीडियो कह्‌ल के जरिए अपने-अपने विचारों के आदान-प्रदान के साथ फोटोस भेजने का सिलसिला भी चलता रहा। आज के युग में शायद दूर बैठे व्यक्ति से विचारों के आदान-प्रदान का इससे अच्छा तरीका और कुछ हो ही नहीं सकता है।

जैसे-जैसे विवाह की तारीख पास आती जा रही थी वैसे वैसे काम का बोझ बढ़ता जा रहा था। विवाह की समस्त रस्मों तथा रिश्तेदारों के रहने के लिए 'होटल अवध 'बुक करा लिया था पर फिर भी काम समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा था। शह्‌पिंग के अतिरिक्त कार्ड छपवाना और वितरित करने का काम भी बाकी था। सिर्फ महीना भर बचा था। समय कम पर काम अनेक..। आनंदी दादी ने जहाँ हर रस्मो रिवाज से परिचय करवाया वही आकांक्षा दी तथा पल्लवी मेरे साथ विवाह की शॉपिंग में सदा साथ रहीं। उस समय लीला और उसकी बेटी शिखा ने पूरा घर संभाल लिया था। यद्यपि शिखा का विवाह हो गया था पर स्नेहा की विवाह का समाचार सुनकर वह भी आ गई थी। सच अगर अपनों का साथ ना हो तो इतनी बड़ी जिम्मेदारी निभा पाना बेहद कठिन होता है।

वह दिन भी आ गया जब दोनों

परिवार स्नेहा के साथ एयरपोर्ट पर अभिनव को लेने पहुँचे। मेरा मन धक-धक कर रहा था पर अभिनव और स्नेहा को आपस में सहजता से बातें करते देखकर सारी दुश्चिंतायें निर्मूल सिद्ध हुईं। तब महसूस हुआ कि शशांक ठीक ही कह रहे थे..। आजकल लोगों का नजरिया बदल रहा है। समझदार लोग आज लड़कियों के रंग रूप को नहीं वरन योग्यता को महत्व देते हैं। वास्तव में योग्यता ही व्यक्ति को सर्वगुण संपन्न बनाती है।

पूरे विवाह में दिव्या, स्नेहा के साथ साए की तरह लगी रही थी। मुझे भी अभिनव सुलझा हुआ इंसान लगा था। विवाह के धूम-धड़ाके के पश्चात विदाई की बेला आ गई थी। कल जो चेहरे खुशी से पुलक रहे थे उन्हीं पर अब उदासी छाई हुई थी। मेरी आँखें बरस पढ़ना चाह रही थीं किंतु मैं उनमें समाए आँसुओं को यत्न पूर्वक रोके हुए थीं। स्नेहा के बिना मैं कैसे रह पाऊँगी, समझ नहीं पा रही थी। इंसानों के बनाए न जाने कैसी रीति रिवाज हैं, न जाने कैसी विवशता है कि जिसे वह अपनी जान से भी ज्यादा प्यार करता है, जिसको कभी एक पल के लिए भी अपनी आँखों से ओझल नहीं करना चाहता,उसे ही एक अजनबी के हाथों सौंपने को विवश हो जाता है।

'कहाँ हो तुम कृष्णा? विदा का समय हो रहा है।' शशांक की आवाज ने मुझे चौका दिया था।

मैं पूजा घर में बैठी, बेटी के सुखी जीवन की मंगल कामना करती, अंतर कवच में कैद सोच ही नहीं पा रही थी कि बाहर निकलूँ या ना निकलूँ क्योंकि अगर मैं बाहर निकली तो न तो अपने आँसुओं को रोक पाऊँगी, न ही स्नेहा को खुशी-खुशी विदा कर पाऊँगी! मैं जानती थी कि मेरी आँखों में आँसू देख कर स्नेहा भी सहज नहीं रह पाएगी। मेरा मानना था कि नई दुनिया, नए घर में प्रवेश आँसुओं के साथ नहीं वरन नई उमंग और नए उत्साह के साथ करना चाहिए।

'मम्मा मैं जानती थी कि आप यहीं होंगीं। ममा बस यही संतोष अपने साथ लेकर जा रही हूँ कि अब आप अकेली नहीं हैं। डैड भी आपके साथ हैं।' स्नेहा ने अंदर आते हुए कहा।

पीछे पीछे शशांक थे। उनका चेहरा भी उनके दिल का हाल बयान कर रहा था। विदा होती बेटी को प्यार से निहारते हुए अनायास ही उसे गले से लगाकर मैं सुबक पड़ी थी।

स्नेहा और अभिनव को अगले ही दिन सिंगापुर के लिए निकलना था। पटफेरे की रस्म के लिए जब वह आई तो उसने हमें एक लिफाफा पकड़या।

'यह क्या है बेटा?'

'आप स्वयं ही देख लो।'

लिफाफा खोला तो दार्जिलिंग का टूर पैकेज देखकर हम चौंक गए। हमारे मना करने पर उसने कहा, 'प्लीज ममा पापा मना मत कीजिएगा। यह तोहफा मेरे और अभिनव की तरफ से है। वैसे भी विवाह के पश्चात आप दोनों कहीं नहीं गए हैं।'

'अरे कहाँ खो गई थीं? कहफी ठंडी हो रही है। मैं कब का कहफी लेकर आ गया हूँ,तुम्हें पता ही नहीं चला। ऊँचे नीचे पहाड़ी इलाकों में पैदल चल पाना मुश्किल होगा, अतः यहाँ के कुछ दर्शनीय स्थलों देखने के लिए टैक्सी लेकर आया हूँ। कॉफी पी लो फिर चलते हैं।' प्यार भरी नज़रों से मुझे देखते हुए शशांक ने हाथ बढ़ा दिया था।

कॉफी पीते हुए मैं शशांक की ओर देखते हुए सोच रही थी कि मन की गति भी कितनी अजीब है। पल में यहाँ पल में वहाँ..। कहते तो हैं कंप्यूटर से तेज कुछ भी नहीं है या उसकी मेमोरी से अधिक किसी की मेमोरी नहीं है पर मुझे लगता है इंसान भी कंप्यूटर से कम तो नहीं है। सारी यादें अवचेतन मन (हार्ड डिस्क) में स्टोर होती जाती हैं। जरा सा कंकड़ (क्लिक) डालते ही, यादें हमारे हृदय पटल (स्क्रीन) पर चलचित्र की भांति उभरने लगती हैं। अच्छी बुरी यादें कच्चे-पक्के चिटठे की तरह हमारी संपूर्ण चेतना को झकझोर कर रख देती हैं। कुछ पलों में ही हम अपना संपूर्ण जीवन जी लेते हैं।

'चलो चलें...।' शशांक ने उठते हुए अपना हाथ उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा।

चलो..। तुम्हारे साथ तो अब मैं बिना थके, बिना रुके आजीवन चल सकती हूँ, चाहे जहाँ चाहे ले चलो, सोचते-सोचते कृष्णा ने शशांक का हाथ थाम लिया था।

डॉ उषा किरण

अभी-अभी हमने नए वर्ष में प्रवेश नए संकल्पों के साथ किया है। पुस माह की ठिठुरी रात की तरह ठिठुरी प्रकृति अपनी ठिठुरन को विदा करती स्वयं सप्तवर्णी श्रृंगार करने को आतुर हो उठी है। एक अलहदा ऋतु जो मृतप्राय में भी प्राण का संचार करती है। इसमें प्राण है, वात्सल्य है, करुणा है, सृजनात्मक है और मादकता है यानि कह लें कि यह सभी रस, रूप और गंध से परिपूर्ण है। वह परिपूर्णा हमारे समक्ष नित्य नवीन की तरह प्रस्तुत है। हमें प्रकृति के इन सब गुणों को स्वयं में आत्मसात करते हुए सामने खड़ी बाधा से दो-दो चार होना है।

यहाँ बात स्वयं को तैयार करने से है ताकि हम अपने सम्मुख किसी भी बाधा का निश्चय पूर्वक सामना कर सकें। गत दो वर्षों से जिस महामारी ने हमें अनेक सच्चाई से रूबरू करा कर एक तरह से हमारी बार-बार परीक्षा ले रही है, जिसकी परीक्षा की कसौटी पर हमें खरा उतरना ही है। तभी हम मनुष्यता का दंभ भर सकते हैं।

एक बार हमें अपने विश्लेषण से गुजरना होगा कि कैसे हम पर कृत्रिमता हावी हो गई है। वास्तविकता की धरातल कहीं-न-कहीं पिछड़ेपन का बोध कराने लगी है। हम सामूहिकता को छोड़ आत्मकेंद्रित होने लगे हैं। यह जो सिकुड़ाव है वह मानव स्वभाव के दर्शन और गुण के सर्वथा विपरीत है जिसे हम अपना कर आत्म उन्नति का खोखला दंभ भरते रहते हैं।

हमारे छोटे होते घर-परिवार, रिश्ते-नाते सब में संकुचन की स्थिति उत्पन्न हो गई है। यहाँ तक कि हमारे हृदय का दायरा भी काफी संकुचित हो गया है। कहाँ है वह परिवार जो बड़ों-बुजुर्गों की छाँव में पनपकर वट वृक्ष बनता था। बच्चों में संस्कार की जो नीव दादा-दादी की गोद में पड़ती थी। उनकी कहानियों के द्वारा, उनके व्यवहार के अनुकरण के द्वारा बच्चे संस्कारी बनते थे। वह कार्य अब आया और प्ले स्कूलों को हस्तांतरित कर दिया गया है। जो लिहाज और सम्मान बहुओं में सास-ससुर के प्रति होता था जिसका हस्तांतरण पीढ़ी-दर-पीढ़ी होता रहता था। वह सब कहाँ विलुप्त हो गया है ?

इन परिस्थितियों में कैसे हम अपनी स्वभाविकता को दरकिनार कर नितांत अकेले, परिस्थितियों का सामना करने में सक्षम होंगे ? हर किसी को विचार करने की आवश्यकता है। भले समय की मांग ने जड़ता को अस्वीकार किया है किंतु हमारी भावनात्मक जड़ता में दृढ़ता होनी चाहिए। तभी एक दूसरे से बंधे और जुड़े रह पाएंगे। यह इसलिए कि किसी भी तरह की समस्यायें हमारे समक्ष छोटी पड़ जाएँ।

आज हम जिस महामारी से जूझ रहे हैं उसे भावनात्मक रूप से एकजुट होकर ही हरा सकते हैं। शत्रु एक दिन दुर्बल होकर स्वयं अस्तित्व विहीन हो जाएगा। जीवन में चुनौतियाँ आती ही रहेंगी। हमें भावनात्मक स्तर पर मजबूत रहना होगा। जब तक हम ''साथी हाथ बढ़ाना'' से परिपूर्ण रहेंगे, सुरक्षित रहेंगे।

इस बसंत हम अपने भीतर आइए बोते हैं कुछ अपनेपन के बीज जिसके अंकुरित होने पर प्यार, अपनत्व, संरक्षण, सहयोग इत्यादि की विशाल भावनात्मक शाखाएँ अपनी छत्रछाया में हमें हमेशा खुशहाल रखेंगी। जब ऐसा होगा तभी हमारे भीतर की प्रकृति चिर-नवीन बनी रहेगी।

हरि बख्श यादव 'हर्ष'

क्रांति का आह्वान

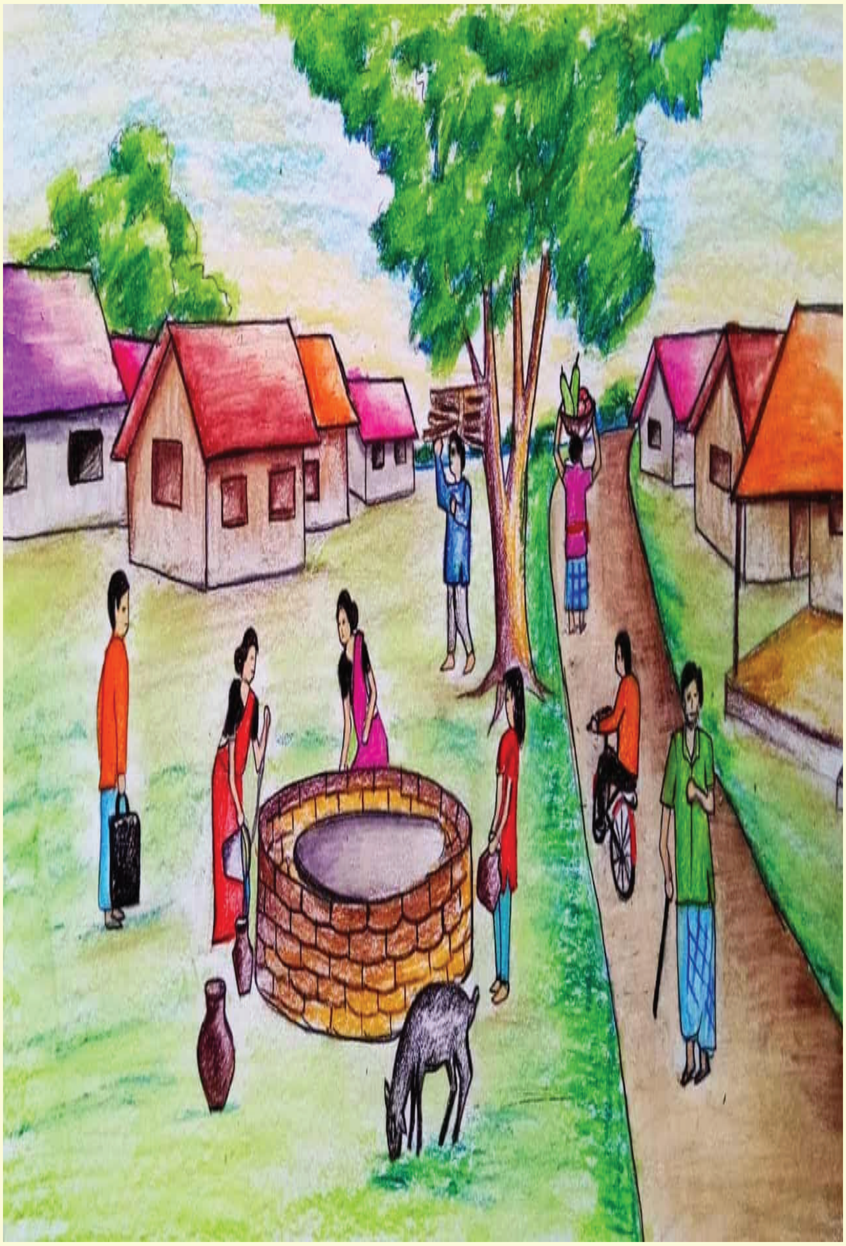

ऐ तरुण! उठ जाग फिर से क्रांति का आह्वान कर
वक्त की पहचान कर तू,वक्त की पहचान कर

शून्य की परछाइयों के,
आम की अमराइयों के
डूबते उस गाँव के तू
ठूँठ से द्रुम छाँव के तू,
क्यों भला नीचे खड़ा है?
क्यों भला पीछे पड़ा है?

उठ खड़ा हो हाथ लेकर गांडीव संधान कर।
वक्त की पहचान कर तू वक्त की पहचान कर।।

ऐ पथिक यूँ क्लान्त होकर,
पथ सृजन पर श्रान्त होकर।
बैठ न यूँ हार कर तू,
विघ्न का संहार कर तू।
क्यों बना कच्चा घड़ा है?
क्यों भला पीछे पड़ा है ?

उठ अभी ऊर्जान्वित हो नीड का निर्माण कर।
वक्त की पहचान कर तू वक्त की पहचान कर।।

निम्नता को त्याग करके
उच्चता को प्राप्त करके
गढ़ कोई प्रतिमान फिर से
बन वही मतिमान फिर से
क्यों न तू खुद से लड़ा है?
क्यों भला पीछे पड़ा है?

उठ और स्वच्छंदता से, फिर नया उन्वान कर।
वक्त की पहचान कर तू वक्त की पहचान कर।।

डाँड़ की लेकर सहारा
मोड़ दे प्रतिकूल धारा
नाव को फिर दे किनारा
डूबते का जो सहारा
क्यों यहां जिद पर अड़ा है?
क्यों भला पीछे पड़ा है?

उठ और नैराश्य होकर, न कोई व्यवधान कर।
वक्त की पहचान कर तू,वक्त की पहचान कर।।

मन का भय

रोहित मिश्र

आज राहुल बहुत खुश था। उसने जो सरकारी नौकरी की पहली परिक्षा पास कर ली थी। अब उसके सामने दूसरी परिक्षा पास करने की चुनौती थी। वैसे तो दूसरी परिक्षा, पहली परिक्षा के मुकाबले अधिक चुनौतीपूर्ण नहीं थी, फिर भी उसमें अलग-अलग मुद्दों पर जानकारी रखनी थी। जिसे निबंध के माध्यम से परिक्षा में लिखना था।

राहुल ने फैसला किया कि वह दूसरी परिक्षा पास करने के लिए भी जी-तोड़ मेहनत करेगा।

उसने अलग-अलग मुद्दों पर निबंधन पढ़ना शुरु कर दिया। यानि सामाजिक, आर्थिक आदि मुद्दों की जानकारी ली, पर अब क्या ?

अब उसके दिमाग में ये बात आई कि जिन मुद्दों के बारे में जानकारी ले रहा है, उनको बिना देखे लिखकर देखा जाए कि कितनी बाते जेहन में उतरी है।

पर जैसे ही लिखने की बात आती तो उसके मन में एक अजीब सा डर बैठ जाता कि मुद्दों के कई टापिक लिखते समय छूट भी सकते है।

फिर उसी की अंतरआत्म बोलती है- डर क्यों रहे हो ? अगर कोई टापिक छूटेगा, तब ही तो मालूम होगा कि तुम्हारी तैयारी कितनी हुई है ? परिक्षा के पहले अभ्यास के जरिए ही अपनी कमियाँ जान सकते हो।

अंतरआत्मा के इस वार्तालाप के बाद ही उसके मन का डर खत्म हुआ और वह पुनः अपने अभ्यास में जुट गया।

निशान्त राज

राजनीति के गुरुमंत्र

'प्रणाम चाचा! कैसे हैं?'

'खुश रहो बबुआ। मैं तो ठीक हूँ। तुम बताओ, शहर से कब आए, और पढ़ाई-लिखाई कैसी चल रही है?'

'चाचा मैंने पढ़ाई छोड़ दी है। मैं अब यहीं गाँव में ही रहूँगा।'

'पढ़ाई छोड़ दी! क्यों? आगे क्या करने का इरादा है बर्खुर्दार?'

'चाचा, अब पढ़-लिखकर सब आइएस आइपीएस थोड़े ही बन जाते हैं। मान लो, अगर आईएस आइपीएस बन भी गए, तो क्या हो जाएगा? सलामी तो अंगूठा छाप नेताओं को ही ठोकनी पड़ेगी न! इसलिए हम भी सोच रहे हैं कि राजनीति में ही हाथ आजमाया जाए। ये ऐसा धंधा है, जिसमें हींग लगे न फिटकरी, रंग आए चोखा वाली बात होती है। बस एक बार हम लोगों की नज़र में आ जाएं, तो फिर आइएस और आइपीएस भी हमें सलामी ठोकेंगे।'

'बात तो सोलह आने ठीक है बबुआ। मगर कुछ सोचा भी है कि ये सब करोगे कैसे? राजनीति का ककहरा भी पता है तुम्हें?'

'इसलिए तो आपके पास आए हैं चाचा। आप खुद ही तीन बार विधायक रह चुके हैं। आप हमें ऐसा गुरुमंत्र बताइये कि हम भी राजनीति के मैदान में झंडे गाड़ दें।'

'ठीक है बेटा। जब तुमने मन बना ही लिया है तो मेरे तीन मंत्र को हमेशा दिमाग में बिठाकर रखना और उसका अनुकरण करना। मेरा पहला मंत्र यह है कि अपने शरीर के अंदर कालनेमी की आत्मा को घुसा लो।'

'कालनेमी...! अब ये कालनेमी कौन है चाचा?'

'अरे बेटा, कालनेमी रामायण का एक पात्र था। जब लक्ष्मण जी को शक्ति बाण लगा था, और हनुमानजी पवित्र संजीवनी बूटी लेने निकले थे, तो हनुमानजी को मूर्ख बनाकर, उनका समय बर्बाद करने के लिए, कालनेमी साधू का वेश धारण करके रास्ते में बैठ गया था, और रामधुन गाने लगा था। हनुमान उसके झाँसे में आकर उसे रामभक्त समझ बैठे। जैसा-जैसा कालनेमी कहने लगा, कालनेमी की माया के वशीभूत हनुमानजी वैसा-वैसा करने लगे। आया कुछ समझ में?'

'जी चाचाजी।'

'तो बताओ क्या समझे?'

'यही कि यदि अपनी राजनीति चमकानी है, और लोगों की चेतना को सम्मोहित करना है, तो हमें जाति, धर्म और मजहब का राजनीतिकरण करना है। लोगों के सामने धर्म के मुद्दे को उछालना है, धार्मिक होने का चोला पहनना है। अपने आपको धार्मिक और अपने विरोधियों को धर्म विरोधी बताकर, उन्हें गालियां देनी है, उन्मादी बातें करके लोगों की भावनाओं को भड़काकर रखना है।'

'अरे शाब्बास! बिल्कुल सही समझे हो। वैसे भी, यदि लोगों को अच्छे काम के लिए बुलाओ, तो वे नहीं आएंगे। लेकिन, यदि उन्हें धर्म और जाति के नाम पर बुलाओ, तो वे सोचे-समझे बिना मरने-मारने के लिए भी तैयार मिलेंगे। राजनीति में लोगों के इसी अंधभावना का इस्तेमाल किया जाता है। वर्तमान

परिप्रेक्ष्य में यह कारगर भी है। खैर हमें इससे क्या? हमें तो अपना उल्लू सीधा करना है। अब तुम दूसरा मंत्र सुनो। गोयबल्स के कथन को अपने मन, वचन और कर्म में आत्मसात कर लो।'

'अब ये गोयबल्स कौन है चाचा?'

'शहर में पढ़कर भी तुम गोयबल्स के बारे में नहीं जानते हो! कहीं तुम घूस-वूस देकर और पैरवी-पट्टा कराकर तो परीक्षा पास नहीं करते थे न? चलो कोई बात नहीं। राजनीति में डिग्रियां कोई नहीं खोजता। ध्यान से सुनो। गोयबल्स हिटलर के सलाहकार थे। उनका कहना था कि यदि किसी झूठ को चिल्ला-चिल्लाकर बार-बार बोला जाए, तो वही झूठ सच लगने लगता है। लोग उस झूठ पर यकीन करने लगते हैं।'

'लेकिन चाचा ये तो बताइये कि क्या झूठ बोलना है, और कैसे बोलना है?'

'अरे बेटा, अपने बारे में झूठ बोलो, विपक्षियों और विरोधियों के बारे में झूठ बोलो। मान लो कि तुम्हारा विपक्षी वास्तव में पढ़ा-लिखा है, दूरदर्शी है, तो लोगों के बीच ये फैलाना है कि तुम्हारा विपक्षी मूर्ख है, अयोग्य है, और तुमसे ज्यादा योग्य कोई नहीं है। इसके अलावा तुम बेशक कोई काम मत करो, लेकिन बातें हमेशा बड़ी-बड़ी करो। शहर के हर कोने में अपनी बड़ी-सी तस्वीर वाली पोस्टर लगवा दो, जिसमें तुम्हारे झूठ-मूठ के कार्यों का बखान हो। दो-चार न्यूज चौनल वाले को पैसा देकर दिन भर अपना गुणगान करवाते रहो। अब तो सोशल साइट का भी जमाना आ गया है। पचास-सौ बेरोजगारों को कुछ पैसे देकर व्हाट्सएप और फेसबुक पर बिठा दो। जहाँ वे सुबह से रात तक तुम्हारे गुण गाएंगे, और विपक्षियों की बुराई करेंगे। अगर कोई तुम्हारे खिलाफ कुछ तथ्य रखेगा, कोई सवाल उठाएगा, तो ये सभी मिलकर उसे गालियाँ देंगे। ध र्मविरोधी और राष्ट्रविरोधी बोलकर उसे पाकिस्तान जाने के लिए कहेंगे। पाकिस्तान से याद आया, लोगों को कभी पाकिस्तान, कभी तालिबान तो कभी अल्पसंख्यकों का भय दिखाते रहना है। ये भय भी कमाल का हथियार होता है। भय लोगों को सशंकित करके उसकी चेतना को कुंद कर देता है। भयभीत और सशंकित व्यक्ति को आसानी से बरगलाया जा सकता है। लोगों के इस भय का भयादोहन करने के लिए पाकिस्तान, तालिबान एवं अल्पसंख्यकों को सबक सिखाने की बातें हमेशा करते रहना है। ताकि लोगों को ये लगे कि तुम बहुत बहादुर और बहुत बड़े देशभक्त हो। बीच-बीच में भावुक होने का नाटक करते हुए, दो-चार बूँद आँसू भी टपका देना है।'

'अरे वाह चाचाजी! ये तो काफी कमाल का मंत्र है! जब लोगों को ये यकीन होने लगेगा कि मेरा विपक्षी अयोग्य, धर्मविरोधी और नकारा है, तो फिर उनके पास मुझे चुनने के अलावा कोई और विकल्प ही नहीं रहेगा। धर्म एवं राष्ट्रवाद को डर की चाशनी में डुबाकर, भावुकता के रैपर में लपेटकर प्रस्तुत करने से, भूख, गरीबी, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार जैसे जरूरी मुद्दे स्वतः ही गौण हो जाते हैं। है न..?'

'सच कहा तुमने। हमारे देश के लोगों को अगर कोई ये कहता है कि कौआ कान लेकर भागा, तो वे अपने कान को देखने की बजाए कौए के पीछे दौड़ पड़ते हैं। वैसे भी आजकल लोगों पास इतना समय ही कहाँ है, कि वे घटनाएं तथा तथ्यों का अपने दिमाग से विश्लेषण करके सच और झूठ तक पहुँचें। सभी व्हाट्सएप और फेसबुक से मिले

ज्ञान को ही अंतिम सच मानकर खुद को परम ज्ञानी समझने लगे हैं। और हमें उनके इसी अतिज्ञानी और आत्ममुग्ध होने का इस्तेमाल अपने हक में करना है।'

'बिल्कुल सही कह रहे हैं चाचा। जब लोग अपना दिमाग इस्तेमाल करना बंद कर देते हैं, तब उनके विचारों को नियंत्रित करना बहुत आसान हो जाता है।'

' बिल्कुल सही समझ रहे हो। तुममें एक नेता की सोच और समझ पहले से मौजूद है। अब तीसरा मंत्र सुनो। तीसरा मंत्र ये है कि नाच न आवे आँगन टेढ़ा वाली बात पर ढीठपने और बेशर्मी से कायम रहना है।'

'नाच न आवे आँगन टेढ़ा...! मैं समझा नहीं चाचा।'

'कहने का अर्थ यह है कि अपनी प्रत्येक कमियों और गलत कामों का ठीकरा, अपने विरोधियों और अपने पूर्ववर्तियों के सर फोड़ना है। वैज्ञानिकों, डक्टरों, इंजिनियरों के सफलता का श्रेय खुद को देना है, और अपने प्रत्येक गलत फैसले का जिम्मेदार पूर्वजों और पड़ोसियों को बताना है। इसके अलावा जब भी कोई सवाल पूछे, तो उसका जवाब नहीं देना है। बल्कि, सवालों के जवाब के बदले में सवाल ही दाग देना है। सवाल पूछनेवालों को राष्ट्रहित और धर्म का विरोधी बताना है। जमीनी और जरूरी मुद्दे से हमेशा लोगों का ध्यान भटकाकर रखना है। जब भी तुम्हारा झूठ जनता की समझ में आने लगे, तब कुछ ऐसा कर देना है कि जनता का ध्यान उसमें उलझकर रह जाए। याद रखना, राजनीति में मुद्दे कभी खत्म नहीं किए जाते। बल्कि उन्हें पाला और पोषा जाता है। इसलिए, हमेशा मंदिर-मस्जिद, हिंदु-मुसलमान और पाकिस्तान-तालिबान जैसे फिजुल के मुद्दों को जन्म देते रहना है, ताकि जनता उसमें उलझी रहे, और तुम अपने फायदे का काम चुपचाप करते रहो।'

'वाह चाचा! आपके मंत्र वास्तव काफी कमाल के और कारगर हैं! आपने उसे समझाया भी बहुत सरल तरीके से है। मुझे ऐसा लग रहा है कि सिर्फ मैं ही नहीं, बल्कि यदि कोई गधा भी आपके सभी मंत्रों का अक्षरशः पालन करेगा, तो उसे राजनीति में सफल होने से कोई नहीं रोक सकता। आपका बहुत-बहुत शुक्रिया कि आपने मुझे इतने गूढ़ मंत्रों से अवगत कराया। ठीक है चाचा, अब इजाजत दीजिए। प्रणाम।'

'जाओ बेटा। राजनीति में खूब नाम कमाओ। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।'

रामानुज अनुज

रात की आँखें लगी

रात की आँखें लगी बरसात का मौसम हुआ।
बादलों का होश जागा और बिस्तर नम हुआ।

वक्त की सब ज्यादती बर्दास्त जब होने लगे,
तब समझना चाहिए की आदमी बेदम हुआ।

गाँव का वह आदमी था भूल उससे हो गई,
नींद में ही चल पड़ा ज्यों दर्द थोड़ा कम हुआ।

कीमती मदिरा की बूंदें या के असली शहद है,
ओस की दो बूंद पीकर कोंपलों को भ्रम हुआ।

कुछ हवाओं का असर था कुछ कमी मिट्टी में थी,
खाद-पानी भी दिये पर अन्न पैदा कम हुआ।

लौट जाओ घर हकीमों अब जरूरत भी नहीं,
घाव से पानी रिसा ही घाव का मरहम हुआ।

आप का आना हुआ क्या रोशनी-सी हो गई,
उड़ चले पक्षी समझकर भोर का आगम हुआ।

आलसी समझे जिसे थे वह जुनूनी सख्स है,
ताल लय से नाचता है संयमित संयम हुआ।

आपके आने का करते शुक्रिया कैसे अनुज,
शोर के माहौल में सब बेसुरा सरगम हुआ।

वह शर्मसार हुए

मोहन लाल यादव

शर्म नारी का आभूषण है, बेशर्मी पुरुष की लंगोट। बेशर्मी की लंगोट ढीली तो समझो उसका पुरुषत्व ढीला। यही है शर्म का सार, जो इसे समझे वही सच्चा षर्मसार। जिसने नहीं जाना वह अनाड़ी, अकर्मण्य। जिसने शर्म को दुतकारा वही हुआ भवपारा। शर्म सियासत के लिए तो कोरोना से भी ज्यादा घातक है। शर्मसार नेता और धोबी के कुत्ते की गति एक समान होती है। इसीलिए एक कामयाब सियासतदां हमेशा शर्म से कोसों दूर रहना चाहिए। जिसने भी इस बीमारी से परहेज करने में कोताही की, उसकी नइया डूबी बीच मजधार में। नाकामयाबी के ऐसे गहरे गर्त में गिरा कि निकलना मुश्किल। इतिहास गवाह है। बड़े-बड़े राजे-महराजे, सीएम-पीएम शर्म के शिकार हो चुके हैं। इसी शर्म के चलते महाराण II प्रताप को घास की रोटियां खानी पड़ी। थोड़ी बेशर्मी ओढ़ लेते और तो आजीवन मौज करते। राजा दशरथ अगर थोड़ी सी बेशर्मी धारण करके अपनी छोटी मैडम को डाट देते तो राम को वनगमन क्यों करना पड़ता और खुद के प्राण क्यों गवानें पड़ते। आजाद भारत में कई राजनैतिक दल अपने एजेंडे में बेशर्मी को शामिल न करने का खामियाजा भुगत रहे हैं और आज वह विलुप्तप्राय होने के कगार पर खड़े हैं।

मंत्री पकौड़ी प्रसाद भी शर्म के मर्म को समझने में चूक कर दी। पार्टी ने मना किया। वह नहीं माने। शुभचिंतको ने मना किया। नहीं मानें। सेक्रेटरी ने भी सोदाहरण समझाया- "मंत्री जी, अपने साहेब से काहे नहीं सीखते? आज वह बेशर्मी के सारे रिकॉर्ड ध्वस्त कर दिए। परिणाम आपके सामने है। सफलता के शिखर पर पहुँच गए कि नहीं?" वह फिर भी नहीं मानें। पत्नी ने भी मना किया। मगर एक न हजार। "चंद्र टरै सूरज टरै..." की तर्ज पर शर्मसार होने की भीष्म प्रतिज्ञा जो कर ली। अपने फैसले से तिल मात्र नहीं डिगे।

विपक्ष तो सालों से उनसे शर्मसार होने की मांग कर रहा था। उनके कान पक गए थे सुनते-सुनते। आखिर एक दिन वह विपक्ष के जाल में फंस ही गए और शर्मसार होने का फैसला कर ही बैठे। घोषणा कर दी-"रविवार सुबह ८ बजे से १० बजे तक मीडिया के सामने शर्मसार होऊंगा।" पत्नी स्तब्ध। गुस्से में बोली, "मैं जानती हूँ कि तुम जैसे बेशर्म को कभी शर्म-वर्म नहीं आएगी। जब तुमको जगहंसाई कराने की ही सूझी है तो शर्मसार होकर देख लो।"

उनकी अप्रत्याशित घोषणा से चमचा मंडली में भी कोहराम मच गया। सेक्रेटरी परेशान, ठेकेदार हैरान, अधिकारी हालाकान। संतरी भी लगा बुदबुदाने! "अगर मंत्री लोगन अइसे शर्मसार होइ लगिहैं तो ई देशवा कइसे चली हो बाबू?" आलाकमान तक बात पहुंच गई। तुरंत पार्टी मुख्यालय में मंत्री की पेशी हो गई। अध्यक्ष लगा भाषण पिलाने, "लाज शर्म के बकवास में तुम क्यों पड़ गए जी? बड़े-बड़े ज्ञानी-ध्यानी भी इस घनचक्कर से बचते-फिरते हैं। शर्म सियासत के लिए जहर है और साहित्य के लिए अभिषाप। आखिर मीरा बाई को क्यों कहना पड़ा-लोक लाज तजि नाची। क्या वह मूर्ख थीं? ऐसे ही नहीं छोड़ दी जग की लाज? उनको मालूम था शर्म का मर्म। एक महिला होकर उन्होंने शर्म को तज दिया और तुम मर्द होकर शर्मसार होने जा रहे हो। देखो, तुम शर्मसार होकर गलत परंपरा की शुरुआत करने जा रहे हो। अब तक पार्टी में कभी ऐसा नहीं हुआ। इस समय तुम्हारे सिर पर पार्टी हित से ज्यादा देश हित का भूत सवार है। मैं कहता हूं विपक्ष की

जाल में मत फंसो? इस आत्मघाती फैसले को तुरंत वापस लो।" मंत्री ने खरा जवाब दिया, "सुनो अध्यक्ष जी, रिश्वत में लिया गया रुपया और मंत्री पकौड़ी प्रसाद के जुबान से निकली दृढ़ प्रतिज्ञा कभी वापस नहीं हो सकती। पद जाए पर वचन न जाई।" अध्यक्ष को गुस्सा तो बहुत आया कि इसे तुरंत पार्टी से निष्कासित कर दे। मगर वह जानता था कि उसकी भी कुर्सी पकौड़ी प्रसाद की चुप्पी पर ही टिकी है। लाचार अध्यक्ष बस इतनी ही विनती कर सका कि ठीक है शर्मसार होने का फैसला ही कर लिया है तो हो जाओ शर्मसार। मगर थोड़ा सतर्क रहना। विपक्षियों के हाथ में कोई मुद्दा न पकड़ा देना।

शर्मसार होने की ऐतिहासिक घड़ी आ पहुँची। टीआरपी संवर्धन के लिए लालायित सैकड़ों पत्रकार शर्म स्थल पर आ जुटे थे। ठीक ८ बजते ही वह शर्मसार हो गए। देखते ही देखते उनका पूरा शरीर शर्म से संक्रमित हो गया। आंखों में शर्म के लाल-लाल डोरे उभर आए। नाक से भी शर्म की बूंदें टपकने लगी। दोनों कान शर्म से खड़े हो गए। उनके कुछ भक्त तो डरने लगे कि मंत्री जी कहीं शर्म से प्राण न त्याग दें। मंत्रीभक्त उनके इस नए रूप को देखकर जयकारे लगाने लगे। एक भक्त चीख पड़ा- "देखा, विपक्षी ससुरे झूठ-मूठ में आरोपित करते थे कि मंत्री जी बेशर्म है। आखिर शर्मसार हुए कि नहीं।" पत्रकारों में सवाल पूछने की होड़ लग गई। धक्कम-धक्का शुरू हो गई। बीसों माइक उनके मुंह में घुसने को आतुर। उन्होंने पत्रकारों को फटकार लगाई, "मैं शर्मसार हूँ, इसका मतलब यह तो नहीं है कि तुम सब बेशर्म हो जाओ। बीसों माइक मेरे मुंह में ठूसे जा रहे हो। सोशल डिस्टेंसिंग की भी परवाह नहीं करते?" पत्रकार थोड़ा दूर-दूर हो गए। "अब ठीक है, अपने सवाल पूछो। मगर ध्यान रखना। ऐसा सवाल न करना कि मैं वक्त से पहले ही पूर्व स्थिति को प्राप्त हो जाऊँ। अगर ऐसा हुआ तो तुम्हें शर्मसार होना पड़ेगा।" उन्होंने पत्रकारों को पहले ही चेता दिया।

पत्रकार- विपक्ष का आरोप है कि आप शर्मसार होने का नाटक कर रहे हैं।

वह- तुमको क्या लग रहा है?

पत्रकार- मुझको तो लग रहा है कि आप सोलह आने शर्मसार हैं।

वह- सही लग रहा है तुमको।

पत्रकार- विपक्ष का एक आरोप यह भी है कि आपको बहुत पहले शर्मसार हो जाना चाहिए था।

वह- अरे भाई, मेरे शर्मसार होने का समय अब विपक्ष तय करेगा?

पत्रकार- क्या कारण है कि विपक्ष आप पर हमेशा आक्रामक रहता है।

वह- अरे भाई, बेचारे खलिहर हैं। अपनी मार्केट बचाने के लिए कुछ न कुछ तो करेंगे ही न? शर्म करो! शर्म करो! इस्तीफा दो! बाहर जाओ! कुर्सी छोड़ो! आखिर यही सब काम तो बचा है उनके पास। क्या चाहते हो कि वे यह भी न करें?

पत्रकार- सर, क्या आप पहली बार शर्मसार हो रहे हैं या इससे पहले भी कभी यह सुकृत्य कर चुके हैं?

वह- हाँ, शादी के बाद तो मौका नहीं मिला। उससे पहले तीन बार शर्मसार हो चुका हूँ।

पत्रकार- उसको भी प्रकाशित करें सर?

वह- छोड़ो! उसे अंधकारित ही रहने दो। प्रकाशित करने में शर्म आती है।

पत्रकार- सर, शर्मसार होकर आप कैसा महसूस कर रहे हैं?

वह- फिलवक्त तो मैं केवल और केवल शर्म ही महसूस कर रहा हूं। मेरे अलावा पूरा देश नग्नता और बेशर्मी के महासागर में गोते लगा रहा है।

पत्रकार- आपको अपनी सरकार कैसे लग रही है?

वह- पूरी बेशर्म!

सेक्रेटरी उनके कान में फुसफुसाया- मंत्री जी, सचमुच शर्मसार हो गए क्या? संभाल कर, वरना अनुशासनात्मक कार्यवाही हो जाएगी। अध्यक्ष पहले ही चिढ़ा हुआ है।

पत्रकार- सर, एक तरफ आपकी सरकार 'बेटी बचाओ! बेटी पढ़ाओ!' का नारा देती है और दूसरी ओर रोज-दर-रोज बलात्कार की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं?

वह- जब चोर, लफंगे और व्यभिचारी कुर्सी पर बैठेंगे तब बलात्कार नहीं तो क्या दुर्गा पूजा होगी? हमारे साहब तो शुरू से ही जनता को चिल्ला-चिल्ला कर आगाह कर रहे हैं 'बेटी बचाओ! बेटी बचाओ!' मगर कोई सुने तब न।

सेक्रेटरी फिर फुसफुसाया। यह क्या ऊटपटांग बोले जा रहे हैं? आप तो अपनी ही पार्टी की बखिया उधेड़ने पर उतारू है। वह झल्ला कर बोले-तो क्या करूँ?

"आप कम से कम शब्दों में जवाब दें वरना सब गुड़ गोबर कर देंगे।" सेक्रेटरी ने सलाह दी। मंत्री को सलाह अच्छी लगी।

पत्रकार- सर, राजनीति के

अपराधीकरण पर आप क्या कहना चाहेंगे।

वह- मैं शर्मसार हूं।

पत्रकार- विपक्ष का आरोप है कि आपकी पार्टी सरकारें गिराने के लिए सांसदों और विधायकों को खरीदती है।

वह- मैं शर्मसार हूं।

पत्रकार- विपक्ष पर या अपनी सराकर पर?

वह- तुम्हारी बदतमीजी पर।

पत्रकार- सारी सर, आपकी पार्टी

के मुखिया बहुत झूठ बोलते हैं।

वह- मैं शर्मसार हूं।

पत्रकार- यह भी आरोप है कि आपकी सरकार में अपराधी निर्भय हैं और जनता भयभीत।

वह- मैं शर्मसार हूं।

पत्रकार- सर, जिस पार्टी से आपको इतना शर्मसार होना पड़ रहा है उसे छोड़ क्यों नहीं देते?

वह- क्या बकते हो? अपनी पार्टी छोड़ दूँ? अबे तुम एनडीटीवी वाले हो क्या?

पत्रकार- नहीं नहीं सर, मैं तो आप वाला ही हूँ। सारी सर।

वह- अबे दो कौड़ी के पत्रकार! तूं मुझको सिखाने चला है। मैं पार्टी छोड़ दूं? मंत्रीपद गवां दूँ?

पत्रकार को मंत्री की आँखों में शर्म के डोरे की जगह क्रोध की ज्वाला दिखाई पड़ने लगी। उसने अपने मोबाइल में समय देखा तो १० बजकर ०२ मिनट हो चुके थे। उसे समझते देर न लगी कि मंत्री जी की बेशर्मी वापस लौट आयी है। वहाँ से सरकने में ही अपनी भलाई समझी।

उसी शाम मंत्री को पार्टी का यह पत्र मिला- "पकौड़ी प्रसाद जी, पार्टी के मना करने के बावजूद आप शर्मसार हुए। आपकी मूर्खता के ही कारण पूरी पार्टी को भी शर्मसार होना पड़ा। पार्टी आप पर अनुशासनात्मक कार्यवाही करते हुए आपको मंत्री पद और साथ ही साथ पार्टी की प्राथमिक सदस्यता से भी मुक्त करती है।"

सेक्रेटरी भी मंत्रीजी की नादानी पर खीझ गया और गालिब चचा का यह शेर बुदबुदाने लगा-

शर्म एक अदा-ए-नाज है अपने ही से सही हैं कितने बेहिजाब कि हैं यूं हिजाब में अब मंत्रीजी अपने सुकृत्य पर स्थायी रूप से शर्मसार हैं।

शालिनी अग्रवाल 'चकोर'

गुबार

हमारी अपेक्षाएँ
हमें ही सताएँ
न पूरी हो पाएँ
तो कसक दे जाएँ
किससे हैं, क्यूँ हैं
ये समझ न आए।
इस अन्तर्वेदना को
जब न कोई समझ पाए
तो दर्द सहने की
इंतहा हो जाए।
मन की शांति का
सबब ढूँढ़ते हैं तो
क्यूँ रखते हैं
किसी से अपेक्षाएँ ?

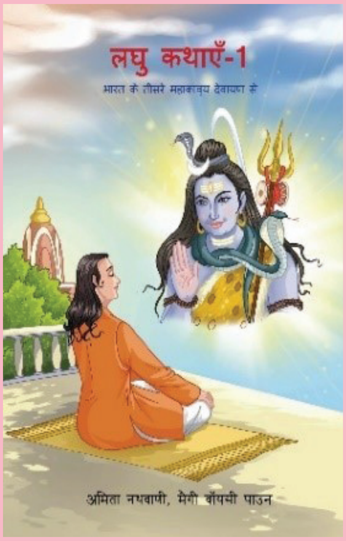

Title : Laghu Kathayein-1/लघु कथाएँ-1 (in Hindi)
Author :Amita Nathwani, Maggie Voysey Paun
Pages : 94 ; Price : Rs.150/-
ISBN PB : 978-81-9506-17-8-5
Subject : Spiritual Stories

लघु कथाएँ-१ मूलतः, यह कहानियाँ बच्चों के लिए हैं क्योंकि वे 'देवायण की कहानियाँ' से सरल और संक्षिप्त किए जाने के बाद ली गई हैं। उनका आकर्षण सार्वजनिक है। इन कहानियों में कुछ अत्यंत रोचक आख्यान सम्मिलित हैं, जैसे, इन्द्र और वृत्र के बीच संघर्ष, कलि का जन्म, अमेरिका में विवेकानंद, अलीपुर जेल में श्री अरविंद के अनुभव, इत्यादि।

इस पुस्तक में कहानियाँ रोमांचक हैं क्योंकि उन्हें एक नई सूक्ष्मता से कहा गया है जो इन अद्भुत कहानियों को विशेष और उत्कृष्ट बनाती है। पाठक, इस पुस्तक में अनावृत किए गए विभिन्न विषयों में तल्लीन हो कर रह जाएगा।

विषय वस्तु पूरी तरह से भारत के तीसरे और नवीनतम महाकाव्य, देवायण से ली गई है।

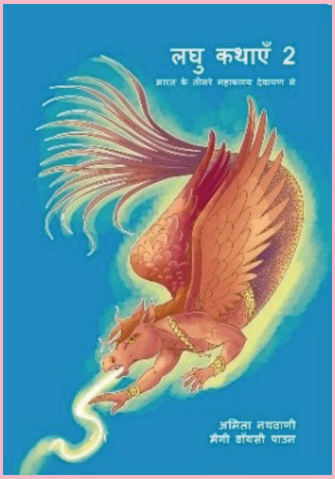

Title : Laghu Kathayein-2/ लघु कथाए-2 (in Hindi)
Author :Amita Nathwani, Maggie Voysey Paun
Pages : 144
Price : Rs.250/-
ISBN PB : 978-93-9275-60-0-9
Subject : Spiritual Stories

लघु कथाएँ-२ यह भारत के तीसरे महाकाव्य, देवायण की अतिरिक्त कहानियों से सरलीत उद्धरण का दूसरा संग्रह है। यह काल के चार युगों की कहानी कहता है। इन कहानियों में कुछ अत्यंत रोचक आख्यान सम्मिलित हैं, जैसे, ष्ण द्वारा शिशुपाल से रुक्मिणि के उद्धार, इंद्र का पृथ्वी से निष्काषन और पुनः बुलाया जाना, कलि और शनि द्वारा स्वर्णिम युग को विलंबित करने की रणनीति। इनमें आदि शंकराचार्य और मंत्र के रूप में वंदेमातरम पर अद्भुत कहानियाँ भी है। यह कहानियाँ पाठकों को यह विश्वास दिलाने में सहायता करेंगी कि स्वर्णिम युग वापस आएगा तथा हम इसी उद्देश्य से अपनी प्रार्थनाओं तथा ऊर्जा को निर्देशित करेंगे।

अमिता नथवाणी का जन्म 1944 में, देहरादून, भारत में हुआ था। श्री अरविंद से अत्यंत प्रभावित हो कर, वे १९६३ में पौंडिचेरी रहने चली गईं। उन्होंने विवाह किया और 1973 से यूरोप में रह रही हैं। भारत, अफ्रीका और यूरोप में कार्य करने के बाद, उन्होंने अपना जीवन देवायण के प्रतिलेखन में समर्पित करने का निर्णय किया है।

मैगी वॉयसी पाउन ने इंग्लैंड में रहने वाले भारतीय बच्चों के बारे में कहानियाँ प्रकाशित की हैं, नाटक तथा वयस्कों के लिए उपन्यास लिखे हैं, जिनमें सभी का भारत के साथ कुछ न कुछ संबंध है। वे कई वर्षों से रश्मि से विवाहित हैं और उनके तीन पुत्र और पाँच पौत्र-पौत्रियाँ हैं।

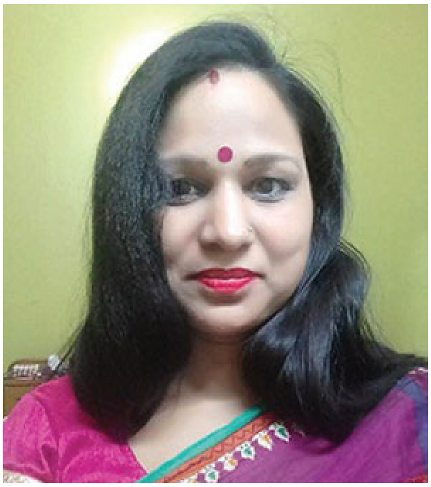

आरती प्रियदर्शिनी
गोरखपुर
सह संपादक
प्रखर गूँज साहित्यनामा

पुनर्जन्म के सिद्धांत

पुनर्जन्म एक रोचक किंतु विवादित विषय है... जिन लोगों ने अपनी आंखों से इसे देखा है वह लोग इसे विश्वास करते हैं परंतु जिन्होंने नहीं देखा वह विश्वास। नहीं करते हैं। फिर भी पूरे विश्व में एक बहुत बड़ा वर्ग पुनर्जन्म में में यकीन रखता है।

पुनर्जन्म के सिद्धांत को अपनी खोज, विश्लेषण एवं निष्कर्ष से विश्वास की नई दिशा देने वालों में अमरीकी परामनोविज्ञान वेत्ता इयान स्टीवेंसन का नाम अग्रणीय है। भारत में राजस्थान विश्वविद्यालय के परामनोवैज्ञानिक प्रोफेसर हेमंत बनर्जी अभी अमेरिका में रहकर इस दिशा में अथक प्रयास कर रहे हैं।

हमारे धार्मिक ग्रंथ गीता में भी स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जिस प्रकार हम पुराना वस्त्र त्याग कर नया वस्त्र धारण करते हैं उसी प्रकार हमारी आत्मा भी पुरानी शरीर को त्याग कर नया शरीर धारण करती है। गीता का यह कथन पुनर्जन्म की धारणा को बल देता है।

आपको आश्चर्य होगा कि पुनर्जन्म को लेकर संपूर्ण विश्व में कुछ ना कुछ विवाद कायम है। क्योंकि पुनर्जन्म को धर्म एवं आस्था से जोड़ दिया गया है जबकि यह मनोविज्ञान का विषय है। हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म में पुनर्जन्म में गहरी आस्था है। परंतु इस्लाम धर्म पुनर्जन्म को नहीं मानता।

ईसाई धर्म के प्रारंभिक दिनों में पुनर्जन्म का सिद्धांत प्रचलित था परंतु कालांतर में उनमें भी दो भाग हो गए जो पुनर्जन्म के पक्ष एवं विपक्ष में अपने-अपने तर्क देते हैं। जो पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं उनका मानना है कि एक बार जिसने मानव योनि प्राप्त कर ली उसका पुनर्जन्म फिर किसी दूसरी योनि में नहीं होता। यह दूसरी बात है कि इस जन्म में जो राजा है वह अगले जन्म में फकीर कोढ़ी या लूला लंगड़ा और अंधा हो सकता है।

एक प्रसिद्ध इसाई लेखक ए.जे. स्टीवर्ट जोकि पुनर्जन्म में विशेष आस्था रखते थे उनका मानना था कि जीव मरने के बाद पुनर्जन्म अवश्य लेता है चाहे वह किसी भी रूप में हो।

एक और प्रसिद्ध उपन्यासकार सर हेनरी राइडर हगार्ड का कहना है कि हम में से प्रत्येक के भीतर जो व्यक्तित्व अनुप्राणित होता है वह अनंत रूप से प्राचीन है, और वह अनेक बार तृप्त करके अपने इस रूप में ढाला गया है।

हिंदू धर्म ऐसा विश्वास करता है कि मनुष्य की आत्मा ईश्वर का अंश है और अंततः अपने देवी स्रोत में वापस चली जाती है, तत्पश्चात मृत्य जीव की आत्मा अंतरिम अवधि तक परलोक में रहने के बाद फिर मृत्यु लोक में अपने पूर्व जन्म के पाप पुण्य के आधार पर जन्म लेती है । गरुड़ पुराण में मृत्यु के बाद आत्मा की स्थिति एवं पुनर्जन्म के बारे में विस्तृत विवरण है।

गरुड़ पुराण में कहा गया है कि कोई मनुष्य मरने के बाद फिर मनुष्य योनि में ही जन्म ले यह आवश्यक नहीं है। वह पौधे वृक्षों वनस्पतियों और पशुओं के रूप में भी दूसरा जन्म ले सकता है। जो व्यक्ति पाप अथवा अपराध भरा जीवन बिताता है वह अगले जन्म में नागफनी, जहरीली लता और छिपकली होता है।

मनु के अनुसार ब्राह्मण की हत्या करने वाला गधे या सूअर के रूप में जन्म लेता है शराबी का पुनर्जन्म मल और गोबर खा कर जीने वाले पक्षियों के रूप में होता है। कुछ पापियों का पुनर्जन्म लकड़बग्घे चूहों तथा घृणित कीड़े मकोड़ों के रूप में होता है, और जो पुण्यात्मा होते हैं वही पुनः मनुष्य योनि को प्राप्त करते हैं।

बौद्ध धर्म में पुनर्जन्म लेने वाली आत्माओं को बोधिसत्व कहा गया है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि बोधिसत्व में कोई ना कोई अवतार होता रहता है, उनका अवतार लेने का क्रम तब तक चलता रहता है जब तक सारे मनुष्यों का उद्धार नहीं हो जाता। तिब्बतियों का विश्वास है कि वह बोधिसत्व जिसका नाम अवलोकितेश्वर है जन्म लेने पर उनका आध्यात्मिक गुरु दलाई लामा होता है। हर दलाई लामा अवलोकितेश्वर अवतार होता है। जब कोई दलाई लामा मरता है तब उसकी आत्मा परलोक में पुनर्जन्म की प्रतीक्षा नहीं करती।

वह तुरंत जन्म लेने वाले किसी तिब्बती शिशु की काया में प्रवेश कर जाती है। दलाई लामा के रूप में बच्चे की खोज करना और उसकी शिनाख्त करना लामा उनकी विशेष समिति का काम है।